वर्ष : ५ अंक : २४, ०७ अगस्त, २०२५

RNI-UPHIN/2021/79954

पंद्रह रुपए

खुले दिमाग़ के खुले विचार

ओपन डोर

राष्ट्रीय साप्ताहिक समाचार-पत्र

आवरण एवं चित्र - डॉ. मृदुला त्यागी

एक सहृदय साहित्यकार

डॉ. विजेन्द्र पाल शर्मा

शोधादर्श (त्रैमासिक शोध पत्रिका) का जनोपयोगी उपक्रम

महेन्द्र 'अश्क' साहित्य शोध संस्थान

- न भाषा भेद होगा न व्यक्ति भेद होगा और न ही होगा क्षेत्र भेद
- संस्थान में होगा पुस्तकालय और संग्रहालय
- प्रत्येक 30 नवंबर को कवि सम्मेलन और मुशायरा
- प्रत्येक 30 नवंबर को सम्मान समारोह
- महेन्द्र 'अश्क' पर आधारित पाण्डुलिपियों का निशुल्क प्रकाशन
- शोध प्रवृत्ति को बढ़ाने के लिए सेमीनार का निरंतर आयोजन
- वो सभी कार्य जो भाषा और साहित्य के उत्थान में सहायक हों

वर्तमान पता

धनौरा देवता, साईं एंक्लेव, नजीबाबाद-246763 बिजनौर (उत्तर प्रदेश)

संपर्क

सचलभाष- 9897742814 ई-मेल- mahendraashk@gmail.com

आपका छोटा-सा सहयोग साहित्य के उत्थान में बड़ा योगदान होगा

डॉ. विजेन्द्र पाल शर्मा विशेषांक क्यों?

संपादकीय

अमन कुमार
amankumarnbd@gmail.com
9897742814

आर्थिक सहयोग के लिए

Aman Kumar
Scan to pay with any UPI app
Union Bank of India 0415 ›

डॉ. विजेन्द्र शर्मा जी से मेरी पहली और अब तक की अंतिम मुलाक़ात नजीबाबाद के आदरणीय इन्द्रदेव भारती जी के आवास पर हुई थी। यह पहला परिचय था सो पत्रकार और लेखक होने के नाते मौन भाव से मुलाक़ाती के हाव-भाव से भी कुछ जानने का प्रयास किया ही जाता है। भारती जी के माध्यम से तो साधारण सा ही परिचय हुआ था परंतु मेरा मन कह रहा था कि शिक्षा और साहित्य के क्षेत्र में ऐसे सहृदय व्यक्ति विरले ही होते हैं। कुछ सामान्य सी बातों के दौरान चाय पी गयी। उस समय डॉ. विजेन्द्र शर्मा जी का हाव-भाव बता रहा था कि वो जल्दी जाना चाहते हैं किंतु कह नहीं पा रहे हैं। जब चाय समाप्त हो चुकी तो उन्होंने अपने बैग से किताब निकाली और एक भारती जी को तथा दूसरी मुझे दी। किताब पर मेरा नाम लिखा और हस्ताक्षर किये। किताब देने की यह बड़ी पुरानी परम्परा तो है किंतु इस परम्परा के प्रत्युत्तर में जो दूसरी परम्परा है उसे बहुत ही कम लोग निभा पाते हैं। मैं भी उन लोगों में से एक हूं। उस दिन याद आ रहा है कि मैंने उन्हें बाईक से बस स्टैंड तक छोड़ा था। इस दौरान भी हमारी बातें कम ही हुई थीं। कारण आकाशवाणी में गीत को गाने सम्बंधी हुई अभद्रता भी रही होगी। लेकिन चलते-चलते शर्मा जी ने कहा था- 'ये कहानियां पढ़कर अपनी प्रतिक्रिया अवश्य देना।' मैंने भी हां कर दी थी। उस समय हां करने के सिवा दूसरा चारा भी तो किसी के पास होता नहीं है। एक जुलाई, २०१९ को प्राप्त पुस्तक 'कर्फ्यू' को मैं पढ़ नहीं पाया और वास्तव में यह पुस्तक कोरोना काल के 'कर्फ्यू' की भेंट चढ़ गयी। कुछ मेरे हालात ऐसे भी बने कि लाख कोशिश करने के बावजूद पुस्तक को हाथ भी नहीं लगा पाया था। अब जब जून २०२५ में 'कर्फ्यू' की कहानियों को पढ़ने का समय निकाला तो कहानी 'दादी माँ' पढ़ने के बाद दूसरी कोई कहानी पढ़ने की हिम्मत नहीं कर पाया। इस कहानी ने मुझे कितना रुलाया है, यह मैं ही जानता हूँ। इस कहानी ने मुझे मेरी दादी की याद दिला दी। ऐसी ही थी मेरी दादी भी। मेरठ रहता था मैं उन दिनों जब मेरी दादी ने यह दुनिया छोड़ी थी। हर सप्ताह आता था उनसे मिलने के लिए। एक ही दिन पहले तो गया था मिलकर। मैं ही जानता हूं अगले दिन मेरठ से नजीबाबाद तक का सफर हज़ारों कोस दूर लगा था। जब मैंने डॉ. विजेन्द्र शर्मा जी के बारे में भाई डॉ. अनिल शर्मा 'अनिल' जी को बताया तो उनके मुंह से निकला- 'बड़े ही सरल हृदय हैं, मेरी मुलाक़ात तो नहीं हुई, बस फोन पर ही बातें हुई हैं। उन पर भी 'ओपन डोर' का विशेषांक निकाला जा सकता है।' यही तो मैं भी चाहता था। उनकी पुस्तक 'कर्फ्यू' पर कोई टिपण्णी न करने की सजा इसी रूप में भुगतने का मन मेरा भी हो रहा था। और फिर आनन-फानन में घोषणा कर दी गयी। डॉ. विजेन्द्र शर्मा जी को सूचना अनिल शर्मा जी और मेरे द्वारा दी गई, जो कि दी जानी भी चाहिए थी। शर्मा जी ने हमारा यह प्रस्ताव बड़े संकोच के साथ स्वीकार किया।

बहरहाल अब यह अंक आप सुधीजनों के हाथों में है और हमारे निर्णय का निर्णय भी। मिलते हैं, अगले अंक भारत की अखण्डता को समर्पित 'आचार्य चाणक्य विशेषांक' के साथ।

नोट- पत्रिका में प्रकाशित कहानियों में प्रयुक्त प्रतीक चित्र मेटा द्वारा निर्मित हैं। मेटा का आभार

ओपन डोर
खुले दिमाग़ के खुले विचार
राष्ट्रीय साप्ताहिक समाचार-पत्र

मूल्य पंद्रह रुपए

वर्ष : ५, अंक : २४, ०७ अगस्त, २०२५

संपादकीय कार्यालय- साई एंक्लेव, निकट धनौरा देवता, नजीबाबाद- २४६७६३ बिजनौर (उप्र)

सदस्यता प्राप्त करें

एक साल १००० रु., दो साल १६०० रु., पांच साल ४८०० रु.
अंक की हार्ड कॉपी न मिल पाने की दशा में पीडीएफ मिलेगी

वैधानिक-समाचार-पत्र में प्रकाशित किसी भी सामग्री से संपादक का सहमत होना आवश्यक नहीं है। किसी भी लेख/समाचार/ कविता/ कहानी/विज्ञापन आदि के लिए लेखक स्वयं ज़िम्मेदार होगा। विवाद की स्थिति में न्यायक्षेत्र नजीबाबाद होगा। सभी पद अवैतनिक

MSME-UDYAM-UP-17-0002703

स्वामी, मुद्रक, प्रकाशक अमन कुमार द्वारा आशीष प्रिंटर्स, मोहल्ला मकबरा, नजीबाबाद से मुद्रित तथा ए-७, आदर्श नगर, तातारपुर लालू, नजीबाबाद- २४६७६३ जिला बिजनौर (उ.प्र.) से प्रकाशित।
संपादक-अमन कुमार
मोबाईल नं.- 9897742814
E-Mail- opendoornbd@gmail.com
RNI-UPHIN/k2021/k79954

डॉ. विजेन्द्र पाल शर्मा : परिचय

नाम - डॉ. विजेन्द्र पाल शर्मा

पिता - स्व. सुक्खन लाल शर्मा

माता - स्व. मन्दरो देवी

जन्म स्थान -गाँव दौराला, जनपद मेरठ, उ.प्र.

जन्म तिथि - ०६/०७/१९५२

शिक्षा - एम.ए., पीएच.डी., स्नातकोत्तर पत्रकार।

सम्प्रति - महाराज सिंह स्नातकोत्तर महाविद्यालय, सहारनपुर से सेवा निवृत्ति के उपरान्त स्वतन्त्र लेखन एवं समाजसेवा।

निवास - ५/३१५१, न्यू गोपालनगर, नुमाईश कैम्प, सहारनपुर उ.प्र., पिन - २४७००१ सचल दूरभाष - ०९४१२४३५७२८, ८६३०१७८७८३

प्रकाशित साहित्य-

- 'आस्था के स्वर' (भक्तिगीत संग्रह) तथा उघड़ती हुई परतें (कहानी संग्रह) सहलेखन के आधार पर।
- 'नैतिक शिक्षा' (बच्चों के पाठ्यक्रमानुसार)
- 'काग़ज़ का भी मन होता है' (गीत-संग्रह)
- 'कर्फ्यू' (कहानी संग्रह) के अतिरिक्त देश की प्रतिष्ठित पत्र-पत्रिकाओं, पुस्तकों एवं संकलनों में लगभग डेढ़ सौ रचनाएँ - गीत, ग़ज़ल, मुक्तक, सस्मरण, सम्मतियाँ, भूमिकाएँ तथा समीक्षाएँ आदि प्रकाशित।
- सहारनपुर के वरिष्ठ कवि श्री योगेन्द्र पाल दत्तप के साथ 'शाकम्भरी मइया के द्वार' शीर्षक से एक भक्तिगीत कैसेट।

सम्पादन - महाराज सिंह कॉलेज, सहारनपुर की वार्षिक पत्रिका 'सुमति' का २५ वर्ष, 'विभावरी काव्य कलश', 'रजत उत्सव स्मारिका', 'डॉ. रामनारायण बागले स्मारिका' का सफल सम्पादन। 'दैनिक हमारा फ़ैसला' में ५ वर्ष, 'मासिक विस्तार बिन्दु', 'मानस मन्थन', 'राजनैतिक समाचार पत्रिका' में साहित्य सम्पादन के रूप में कार्य किया।

विशेष - अखिल भारतीय कवि सम्मेलनों, दिल्ली दूरदर्शन, आकाशवाणी मथुरा, नजीबाबाद और जामिया मिलिया इस्लामिया विश्वविद्यालय, दिल्ली के एफ.एम. चैनल पर काव्यपाठ एवं साक्षात्कार।

सम्मान -

१. 'विभावरी' सहारनपुर द्वारा 'साहित्य गौरव सम्मान',
२. 'अरुणोदय' सहारनपुर द्वारा 'गीत गौरव सम्मान',
३. 'राष्ट्रीय जन कल्याण मंच' सहारनपुर द्वारा 'साहित्य वारिधि सम्मान'।
४. 'नाट्य' सहारनपुर द्वारा 'नाट्य रत्न सम्मान'।
५. 'साहित्य सुधा' सहारनपुर द्वारा एस.पी. गौहर स्मृति सम्मान'।
६. 'सामंजस्य' हरदोई उ.प्र. द्वारा 'रसखान सम्मान'।
७. 'संस्कृत-हिन्दी परिषद' देववृन्द (सहारनपुर) द्वारा 'राष्ट्र स्वाभिमान सम्मान'।
८. 'देवी कपूरी वर्मा ट्रस्ट' सहारनपुर द्वारा 'देवी कपूरी वर्मा सारस्वत सम्मान'।
९. 'साहित्य सेवा मंच' देववृन्द द्वारा 'साहित्य सर्जक सम्मान'।
१०. 'एम.एस. कॉलेज' 'सहारनपुर द्वारा 'बाबू महाराज सिंह सारस्वत सम्मान'।
११. 'काव्य गन्धा' बरेली द्वारा 'सारस्वत सम्मान'।
१२. 'समन्वय' सहारनपुर द्वारा 'सृजन सम्मान'।
१३. 'शब्दाँगन' बरेली द्वारा 'साहित्यिक सम्मान'।
१४. 'अखिल भारतीय भ्रूण संरक्षण संस्थान' मेरठ द्वारा 'हिन्दी काव्य रत्न सम्मान'।
१५. 'अहिन्दी भाषी हिन्दी लेखक संघ' दिल्ली द्वारा 'सरस्वती साहित्य गौरव सम्मान'।
१६. 'ब्राह्मण समाज सेवा समिति', सहारनपुर द्वारा 'विशिष्ट प्रतिभा सम्मान'।
१७. 'राष्ट्रीय कवि संगम' देहरादून द्वारा 'सारस्वत सम्मान'।
१८. 'साहित्य सुरभि' बरेली द्वारा 'काव्य-मर्मज्ञ सम्मान।
१९. 'क्रान्तिकारी छात्र परिषद' बरेली द्वारा 'त्याग सम्मान'।
२०. 'शैल साहित्यिक संस्थान' प्रतापगढ़ द्वारा 'साहित्य गौरव सम्मान'।
२१. 'सृजना' साहित्यिक संस्था प्रतापगढ़ द्वारा 'सारस्वत सम्मान'।
२२. 'आचरण' उन्नाव द्वारा 'भाषा भूषण सम्मान'।
२३. 'अशोक आर्य स्मृति सम्मान समिति' बरेली द्वारा 'अशोक आर्य स्मृति सम्मान'।
२४. 'श्री गोविन्द हिन्दी सेवा समिति' मुरादाबाद द्वारा 'हिन्दी काव्य रत्न सम्मान'।
२५. 'नारायणी साहित्य अकादमी' नई दिल्ली द्वारा 'सारस्वत सम्मान'।
२६. 'उद्‌गार' देहरादून द्वारा 'उद्‌गार श्री सम्मान'।
२७. 'इण्टरनेशनल गुडविल सोसाइटी' हरिद्वार द्वारा 'हिन्दी सेवी सम्मान'।
२८. 'हिन्दुस्तानी भाषा अकादमी' दिल्ली द्वारा 'प्रथम हिन्दुस्तानी भाषा काव्य प्रतिभा सम्मान'।
२९. 'के.बी. हिन्दी साहित्य समिति' बिसौली, बदायूँ द्वारा 'शारदा देवी स्मृति हिन्दी भूषण श्री सम्मान'।
३०. मानसी सहारनपुर द्वारा सारस्वत सम्मान।
३१. गोल्डन बुक आफ वर्ल्ड रिकार्ड में शामिल।
३२. नगर निगम सहारनपुर द्वारा 'मौलवी निश्तर ऐवार्ड'
३३. संस्कार भारती, सहारनपुर द्वारा 'गुरु सम्मान'।
३४. कवि गोष्ठी आयोजन समिति, बरेली द्वारा 'साहित्य महारथी' सम्मान।
३५. साहित्य-संगम पछवाद्न विकासनगर द्वारा 'साहित्य-वारिधि' सम्मान।
३६. शोभित विश्वविद्यालय गंगोह द्वारा 'श्री सम्मान'।
३७. साहित्योदय, रुड़की द्वारा 'हिन्दी साहित्योदय सम्मान'।
३८. राष्ट्रीय पत्रकार महासंघ द्वारा सारस्वत सम्मान।
३९. अदाकार ग्रुप द्वारा 'साहिल फरीदी सम्मान'।
४०. मन्सा फाउण्डेशन, जयपुर द्वारा-राष्ट्रीय प्रतिभासम्मान।
४१. अखिल भारतीय साहित्य मंच, मोदी नगर, सारस्वत सम्मान।
४२. डॉ. उर्मिलेश शंखधार स्मृति सम्मान रुड़की।
४३. राष्ट्रकवि सुमित्रानन्दन पन्त स्मृति सम्मान-पल्लवमंच, रामपुर।
४४. साहित्य-अर्पण दुबई की भारतीय शाखा द्वारा सारस्वत सम्मान।
४६. संस्कार भारती सहारनपुर द्वारा 'गुरु सम्मान'।
४७. कविगोष्ठी आयोजन समिति, बरेली द्वारा 'साहित्य महारथी' सम्मान।
४८. शब्द गंगा एवं आल इण्डिया जर्नलिस्ट एसोसिएशन, हरिद्वार द्वारा शब्द गंगा, साहित्य सम्मान।

आदि अनेक सम्मान आपको प्राप्त हो चुके हैं।

संजय गर्ग
पूर्व विधायक

4/1075, चकरौता रोड, सहारनपुर–247001 (उ. प्र.)
संपर्क : 0132-2647474, 9412230909

सदस्य विधान सभा उत्तर प्रदेश

क-6 № 249082

"भारतीय संस्कृति के ध्वज वाहक"

कतिपय इन्सान अपने कर्म से समाज में एक विशिष्ट पहचान बना लेते हैं। ऐसे ही सहज, सरल, सहृदय एवं बहुआयामी व्यक्तित्व के धनी कर्म–योगी **डा0 विजेन्द्र पाल शर्मा** का समाज में एक विशिष्ट स्थान है। मेरा उनके साथ रिश्ता कई दशकों पुराना है। महाराज सिंह कालेज, सहारनपुर में मैं सन् 1974–76 तक बी0एस0सी0 का छात्र था, तब मेरा पहली बार सामना रसायन शास्त्र की प्रयोगशाला में एक मृदुभाषी लैब एसिस्टेंट से हुआ, जिनकी भूमिका छात्रों में एक सहयोगी उत्साहवर्द्धक के रूप में थी। अपनी नौकरी करते हुए भी हिन्दी के प्रति अगाध प्रेम होने के कारण एम0ए0 हिन्दी एवं डा0 सुरेश चन्द त्यागी जी के निर्देशन में शोध करके डॉक्टरेट की डिग्री लेकर उन्होने अपने बहुआयामी व्यक्तित्व को सिद्ध किया, तथा इस महाविद्यालय में हिन्दी शिक्षक के रूप में अपनी सेवाएँ दी। सादा जीवन उच्च विचार का पालन करते हुए एक पुरूषार्थी के रूप में उन्होनें अपने गृहस्थ जीवन की समस्त जिम्मेदारियों को बडी ईमानदारी से पूरा किया।

हिन्दी भाषा के मर्मज्ञ, गद्य एवं पद्य दोनों में श्रेष्ठता रखते हुए, सामाजिक सरोकारों से जुड़ते हुए अपनी मौलिक सोच के कारण उनकी प्रत्येक रचना नवीनता लिये हुए है। हिन्दी भाषा के अक्षरों को लिपिबद्ध कर उनको स्वर प्रदान करने की उनमें अद्भुत क्षमता है। शर्माजी शब्दों के जादूगर हैं।

हजारों वर्षों से मर्यादा पुरूषोत्तम भगवान राम के द्वारा मर्यादित, कर्म की सर्वोच्चता को मानते हुए करूणा, मैत्री, मुदिता के रास्ते पर चलते हुए, एक सफ में बैठकर भाईचारे और माफी जैसे महान आदर्शों को अपना आधार बनाकर, संगत और पंगत में बैठकर लंगर चखते हुए परमार्थ और सेवा के रास्ते पर चलकर भारतीय संस्कृति ने मानवता के जो नायाब प्रतिमान गढें हैं, **डा0 विजेन्द्र पाल शर्मा जी** ने अपने व्यक्तित्व और कृतित्व से उन्हें नई ऊर्जा प्रदान की है। ऐसे भारतीय संस्कृति के ध्वजवाहक की हम दीर्घायु होने की कामना करते है। हिन्दी साहित्य के महत्वपूर्ण स्तम्भ के रूप में वे नई पीढ़ी के लिये हमेशा प्रेरणा स्त्रोत बने रहेगें।

संजय गर्ग
(पूर्व विधायक एवं मंत्री)

चौ० चरण सिंह विश्वविद्यालय, मेरठ
CH. CHARAN SINGH UNIVERSITY, MEERUT

विक्रम चन्द्र गोयल
कुलपति
Vikram Chandra Goel
Vice-Chancellor

Office 0121-2760554, 0121-2760551
Fax 0121-2762838, 0121-2760577
Mobile 09412780999

Ref. No. SVC/19/6015
Dated : 03.07.2015

प्रमाण – पंत्र

यह अत्यन्त हर्ष का विषय है कि डा. **विजेन्द्र पाल शर्मा**, संयोजक, महाविद्यालय शिक्षणेतर कर्मचारी समन्वय समिति, सम्बद्ध चौ. चरण सिंह विश्वविद्यालय, मेरठ, वर्ष 2001 से निरन्तर समस्त महाविद्यालयों में कार्यरत कर्मचारियों के हितों की रक्षार्थ सकारात्मक दृष्टिकोण रखते हुए सतत् प्रयत्नशील, हैं। इन्होंने तर्कपूर्ण शैली, ईमानदार कौशिश, निष्काम भाव तथा श्रेष्ठ आचरण के बल पर विश्वविद्यालय स्तर से कर्मचारियों के कल्याण हेतु बड़ी संख्या में विशिष्ट उपलब्धियाँ अर्जित की हैं।

इस अवधि में कर्मचारियों की समस्याओं/माँगों आदि के सन्दर्भ में विश्वविद्यालय परिसर में सम्पन्न समस्त वार्ताओं के बीच विश्वविद्यालय के शीर्ष अधिकारियों तथा स्टाफ सदस्यों के साथ डा. शर्मा का व्यवहार अत्यन्त संयत, सहज, सम्मानजनक तथा मधुर रहा है।

मुझे व्यक्तिगत रूप से यह जानने का अवसर भी प्राप्त हुआ है कि डा. शर्मा हिन्दी भाषा की विभिन्न विधाओं के सुपरिचित रचनाकार हैं। मधुर गीतकार के रूप में इनकी विशिष्ट पहचान है, जो विश्वविद्यालय के लिए गौरव का विषय है।

मैं कामना करता हूँ कि डा. विजेन्द्र पाल शर्मा स्वस्थ, सानन्द रहते हुए दीर्घायु हों तथा यथाशक्ति साहित्य और समाज सेवा में संलग्न रहें।

(वी० सी० गोयल)

website : www.ccsuniversity.ac.in, e-mail : vc@ccsuniversity.ac.in, vcgoel@gmail.com

स्वामी भारत भूषण डी.लिट
Swami Bharat Bhushan D.Lit
(Recipient of first 'Padma Shri' for yoga in 1991 by President of India)
'Arjun Shri' & 'Pratap Shri' Of India
Hony D.Lit. by CCS State University
'Awadh Samman' & 'LifeTime Achievement Award' by U.P. Govt.
'Life Time Achievement Award' by AIIMS, New Delhi
'Global Gem of Yoga' by Pulian International China

yogamok@gmail.com
+91 941 255 7900

शुभाशंसा

कैसा अजूबा है विधाता का कि इस साधारण सी कद काठी में ही दुनिया को दिशा दे देने वाले महामानव जन्मे हैं और मानवता का विध्वंस करने वाले भी। ये कदाचित इसी बात पर निर्भर करता रहा है कि हमने अपने भीतर की सामर्थ्य को किस दिशा में, किस हद तक सक्रिय कर दिया। ऐसी ही एक विभूति को निकट से जानने का गौरव मुझे प्राप्त है जो इस साधारण कलेवर में रहकर असाधारण है और भावों को शब्दों की माला में गूंथ कर सृजन की नित नूतन गाथा लिखने की सामर्थ्य रखते हैं।

मैंने बरसों पहले कोमल संवेदनाओं के बीज को अपने भीतर गहरे संजोए विज्ञान की प्रयोगशाला सहायक के रूप में आजीविका अर्जित करते एक कबीर को देखा। हां, उन्होंने कबीर, रैदास और प्रसाद की ही तरह अपनी आजीविका को जीवन साधना पर हावी नहीं होने दिया, परिणाम जगजाहिर है कि उनकी हिंदी साधना ने उन्हें महाविद्यालय में हिंदी विभाग का शिक्षक ही नहीं, ऐसा कवि भी बना दिया जो मंच मे भी है और ग्रंथ में भी।

मुझे गर्व है कि श्री विजेंद्रपाल शर्मा को सुनता हूं तो उनकी अन्तर्वेदना सहित हर संवेदना सीधी भीतर उतरती जाती है और पढ़ता हूं तो पुस्तक को पूरा गटकने तक थमा ही नहीं जाता, उसे पूरा पढ़ने के बाद ही जुगाली करता हूं तो ' वाक्यम रसात्मकम काव्यम ' जनित भावजगत में रस की पराकाष्ठा की गहराई ध्यानावस्था का आनंद देती है।

यह जानकर प्रसन्नता हुई सहारनपुर कि बरसों से प्रतिष्ठित संस्था विभावरी के कर्मठ सचिव, एक लक्ष्यनिष्ठ कर्मयोगी, निष्ठावान संगठनकर्ता और समाज तथा साहित्य के प्रति सहज रूप से समर्पित डा विजेन्द्र पाल शर्मा जी के व्यक्तित्व व कृतित्व पर केंद्रित एक प्रामाणिक संकलन के प्रकाशन की योजना को आप मूर्त रूप देने जा रहे हैं।

विभिन्न क्षेत्रों में उनकी सक्रिय सहभागिता शिक्षा, साहित्य और समाज के लिए उनकी उपयोगिता को स्थापित करते हैं। उनके जीवन वृत्त पर आधारित ये ग्रंथ अन्यानेकों के लिए पथप्रदर्शक बने मेरी ऐसी शुभकामना है।

22 जुलाई 2022

(स्वामी भारत भूषण)

Mokshayatan Yog Sansthan
Headquarters: Beri Bagh Saharanpur-247001 U.P. (India), Delhi Unit Office: C-8/14, Yamuna Vihar Delhi-53
Gymnasiums : Yoga Training : Meditation Sessions : Nature Cure Service : Health Contests : Health Publication
Correspondence Section : Humanity Service Forum : Healthy Blood Donation : Education Expansion : Library Service
Discussion Forum : Cultural Activities : Vishva Kalyan Yajan : Rashtra Vandana Mission : World Brotherhood Activities
Web: www.bharatyog.com +91 132 2663030, 9868152963
/Bharat Yoga /@swamibharatbhushan /bharatyogaa

राजेश कुमार राय

(पूर्व आई जी पुलिस, लखनऊ)
१२६ मानस एनक्लेव, निकट थाना इंदिरानगर,
लखनऊ उ.प्र. दूरभाष ९४५४०००१११

मैं डॉ. विजेंद्र पाल शर्मा जी से लगभग ३० वर्षों से जुड़ा हुआ हूँ और ईश्वर की कृपा से उनके स्नेह का भाजन रहा हूँ।

मैं वर्ष १९९२ से १९९४ तक सहारनपुर में अपर पुलिस अधीक्षक के पद पर नियुक्त रहा। इसी दौरान सौभाग्य से मैं विभावरी संस्था और उसके सभी प्रमुख लोगों से विशेष रूप से डॉ. विजेंद्र शर्मा जी के संपर्क में आया। मेरे लगभग २ वर्ष के सहारनपुर के कार्यकाल में विभावरी से जुड़ना और विशेष रूप से डॉक्टर विजेंद्र शर्मा जी का स्नेह पाना मेरे लिए बहुत ही सौभाग्य का विषय रहा है। मुझे गर्व है कि नगर की एक संस्था 'अरुणोदय' ने भव्य आयोजन करके डा शर्मा और मेरा साथ-साथ सारस्वत अभिनंदन किया था। डॉ. विजेंद्र पाल शर्मा न ही केवल एक अति उत्कृष्ट रचनाकार व साहित्यकार हैं, बल्कि वे एक बेहतरीन, सहज, सरल व मानवीय संवेदनाओं से परिपूर्ण व्यक्तित्व के धनी भी हैं।

मुझे इस बात की बड़ी खुशी है कि नजीबाबाद से प्रकाशित होने वाली पत्रिका 'ओपन डोर' डॉ. साहब के समृद्ध व्यक्तित्व व कृतित्व से संबंधित प्रामाणिक विशेषांक का प्रकाशन कर रही है। मैं 'ओपन डोर' के सम्पादक मण्डल को इस पुनीत कार्य के लिए बहुत-बहुत बधाई देता हूँ और डाक्टर विजेंद्र पाल शर्मा जी को बहुत-बहुत शुभकामनाएँ देता हूँ तथा उनके उज्ज्वल भविष्य व सुंदर, सुख-शान्ति से भरपूर भविष्य के लिए ईश्वर से प्रार्थना करता हूँ।

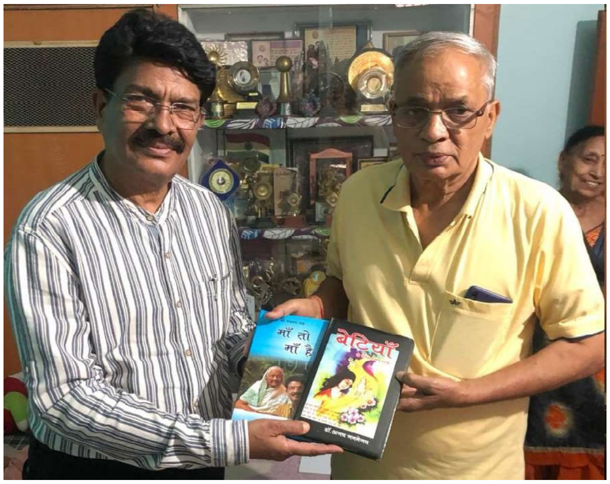

मेरे बड़े भाई डॉ. विजेन्द्र पाल शर्मा : मैंने उन्हें जैसा पाया

आप की सहृदयता है कि आप मेरे पिताजी के स्वर्गवास पर इतनी लम्बी दूरी तय करके न केवल बिजनौर पधारे बल्कि मेरे परिवार को परिवार के बड़े सदस्य के रूप में सांत्वना प्रदान की।

डॉ. अजय जनमेजय

कहूँ अगर मैं दिल से अपने,
सहज सरल तुम सा न देखा।

एक ही व्यक्ति बहुत अच्छा मंच संचालन करता हो, बहुत अच्छा संगठन कर्ता हो, बहुत अच्छा गीतकार हो, बहुत अच्छा ग़ज़लकार हो, बहुत अच्छा कहानीकार हो, साहित्य की अनेकानेक विधाओं का अच्छा ज्ञाता-समीक्षक हो, सुन्दर माहिया न केवल लिखता हो अपितु उन्हें अपनी मधुर आवाज़ में जब सुनाए तो श्रोता मंत्रमुग्ध होकर बस यही कहें एक और एक और...

जो व्यवहार में सरल, बड़ों का आदर करने वाला व छोटों को हमेशा प्यार करने वाला व प्रेरणा देता हो, अगर आप दूरभाष पर बातें कर रहे हैं तो आपको लगे आप अपने बहुत ही आत्मीय व सदा आपके शुभ चाहने वाले से बातें कर रहे हैं तो वो जो आपके हर सुख दुख में शामिल होकर आपको संबल प्रदान करता रहा है, इतने सारे गुणों को लेकर भी जो सहज है, सरल व सहृदयी हैं अगर आप भी मेरी तरह केवल श्री विजेन्द्र पाल शर्मा जी के बारे में सोच रहे हैं तो आप शत-प्रतिशत सही हैं।

मेरी पहली औपचारिक मुलाक़ात आपसे सहारनपुर के एक साहित्यिक कार्यक्रम में हुई पर अगली ही मुलाक़ात में मुझे वो मेरे बड़े भाईजी के रूप में लगे ये रिश्ता समय के साथ-साथ न केवल प्रगाढ़ हुआ बल्कि मेरे लेखन में भी बहुत सहायक सिद्ध हुआ। ये मेरा सौभाग्य है कि अब मेरे पास एक वरिष्ठ साहित्यकार का मार्गदर्शन एक फोन की दूरी पर सुलभ है। 'धरोहर स्मृति न्यास' के पुरस्कारों हेतु निर्णायक मंडल के सदस्य का भार वहन करने हेतु मेरे निवेदन को सहर्ष स्वीकार करके आपने पुरस्कार हेतु आईं सभी कृतियों का गहन अध्ययन करके प्रथम पुरस्कार के लिए न केवल कृति का चयन किया बल्कि आयोजन में आकर अपने चयन की सार्थकता एवं चयनित कृति की सामाजिक उपादेयता तथा महत्ता के बारे में बताकर आयोजन की गरिमा भी बढाई।

आप की सहृदयता है कि आप मेरे पिताजी के स्वर्गवास पर इतनी लम्बी दूरी तय करके न केवल बिजनौर पधारे बल्कि मेरे परिवार को परिवार के बड़े सदस्य के रूप में सांत्वना प्रदान की।

आपको जो भी कार्य जीवन में सौंपा गया, चाहे वो अध्यापन का हो, सम्पादन का हो, संचालन का हो आपने सदा अपना उत्कृष्ट दिया है। आपके हर प्रयास को यही कहा जा सकता है-

एक नदी छोटी है लेकिन देखो तो,
सागर का खारापन हरने आई है।

आपके परिवार में सब लोगों को बख़ूबी पता है कि अगर किसी को कोई दुख या परेशानी है तो सबसे पहले उसमें शामिल होने वाले व उस के लिए दिल से प्रयास करने के लिए सबसे पहले शख़्स आप ही होंगे कह सकता हूँ-

पीर जो गैर की भी समझा है,
वो ही सचमुच यहाँ पर ज़िंदा है।

ये भली भाँति ज़िंदगी के इस फ़लसफ़े को जानते हैं-

कर मदद औरों की तू भी बागवाँ हो जाएगा,
खुद ही खुद में गर जिया सब रायगाँ हो जाएगा।

आपके यहाँ किसी भी परिस्थिति में निराश नहीं होते हैं। हर परिस्थिति को सुखद बनाना उसके लिए अपना शत-प्रतिशत प्रयास करना कोई आपसे सीखे, कह सकता हूँ-

जिन्हें ताबीर करना आ गया हो कल के सपनों को,
भरी हो नींद आँखों में मगर सोया नहीं करते।

बुरी-से-बुरी परिस्थिति होने पर सकारात्मक सोच रखने वाले बड़े भाई शर्मा जी के बारे में यूँ कहूँ तो शायद और भी ज़्यादा ठीक होगा-

रात हिस्से में मिली है रात का भी कर गुरुर,
यानि हिस्से में तेरे अब चाँद भी होगा ज़रूर।

आपके बारे में सोचना आपकी अब तक की यादों को उलटना-पलटना मुझे सदा एक अच्छा इंसान बनने की प्रेरणा प्रदान करता रहा है।

आपसे मिलना मेरा सौभाग्य है, अपनी बातों को विराम देते हुए आपको श्रद्धावनत हो, प्रणाम करता हूँ और दिल की गहराई से-

मित्र हैं जिसके पास उसे फिर और ख़ज़ाना क्या,
मित्र नहीं तो इस दुनिया में आना-जाना क्या।
पायदानों बैठ पाया मैं बड़ों के गर्व है, उनसे जो कुछ सीख पाया वो है हितकारी बहुत।

●

डॉ. विजेन्द्र पाल शर्मा का कथा साहित्य मुझे उनके कहानी-संग्रह 'कर्फ्यू' के रूप में वर्ष २०२२ में मिला और मैं उसकी समीक्षा कर पाया! दस उत्कृष्ट कहानियों के इस संग्रह की एक कहानी का अंश इस लेख के परिप्रेक्ष्य में देना समीचीन प्रतीत हो रहा है। कहानी 'संकल्प' से पात्र गुरुजी का एक संवाद द्रष्टव्य है - 'किसी भी समाज की श्रेष्ठता उसकी सम्पदा, सोने-चांदी के भण्डारों से नहीं आंकी जा सकती। उसकी श्रेष्ठता का अनुमान ऊंची अट्टालिकाओं, विलासी रहन-सहन अथवा विज्ञान के पंखों पर सवार होने से नहीं लगाया जा सकता, अपितु उसकी समृद्धि का द्योतक उसका जीवन्त सदाचार होता है और सदाचरण का उदय होता है दृढ़ संकल्प से !'

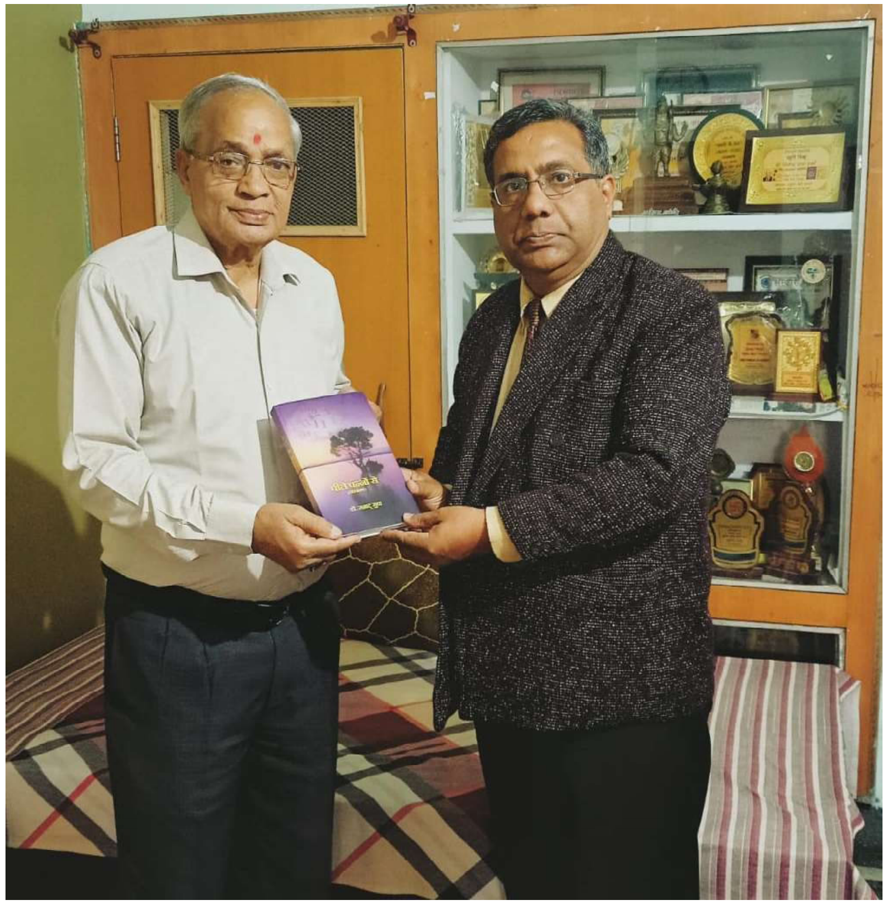

डॉ. विजेन्द्र पाल शर्मा
सम्पूर्ण साहित्यिक संस्कारों के साहित्यकार

प्रोफेसर डॉ. सम्राट् सुधा

राष्ट्रीय साप्ताहिक समाचार पत्र 'ओपन डोर' को डॉ. विजेन्द्र पाल शर्मा पर विशेषांक निकालना है, इस सूचना सहित लेख आमंत्रण का जो संदेश आता है, उसमें डॉ. विजेन्द्र पाल शर्मा के नाम से पूर्व दो विशेषण हैं - ''सहृदय-साहित्यकार!''

काव्यशास्त्र के अनुसार ''सहृदय'' वह पाठक या दर्शक है, जो किसी काव्य या नाटक को समझने और उससे भाव ग्रहण करने की क्षमता रखता हो। इतना ही नहीं, वह व्यक्ति, जो कवि या नाटककार के भावों को समझकर उनसे तादात्म्य स्थापित कर सके, वह ''सहृदय'' है। साहित्यकार के साथ ''सहृदय'' की आवश्यकता क्या? क्या साहित्यकार में सहृदयता सम्मिलित नहीं? क्या कुछ ''हृदयविहीन'' साहित्यकार भी हैं? इन्हीं के परिप्रेक्ष्य में मुझे डॉ. विजेन्द्र पाल शर्मा के व्यक्तित्व और कृतित्व पर कुछ कहना है!

डॉ. विजेन्द्र पाल शर्मा साहित्य के आदर्श और मूल्यों को संरक्षित रखने वाले साहित्यकार हैं! सृष्टि में सर्वत्र व्याप्त ''ईश्वरीय काव्य'' को चिह्नने की शक्ति उनके पास है और उससे तादात्म्य कर सर्जन की भी, तो वे वास्तव में हुए- ''सहृदय साहित्यकार'' ही ! विचार से या बिना विचारे, जैसे भी, उन पर विशेषांक के प्रकाशन की शुभ सूचना में प्रभु ने उनके लिए सटीक और सार्थक विशेषण, ऐसा लिखने वाले से प्रयुक्त करा लिए हैं!

डॉ. विजेन्द्र पाल शर्मा के काव्य से मैं लगभग १८ वर्ष पूर्व सहारनपुर की एक काव्य गोष्ठी में परिचित हुआ। उनकी वह कविता अब स्मरण नहीं, लेकिन वह विशुद्ध कविता ही थी! सौम्य प्रस्तुति, गोष्ठी में या अन्यत्र भी शालीनता, अन्य कवियों को दत्तचितता से सुनने का संस्कार, बाहर से आये कवियों का सत्कार, समग्र परिवेश

के प्रति काव्यात्मक संप्रेषणीयता, ये सब डॉ. विजेन्द्र पाल शर्मा के व्यक्तित्व या कहूँ उनके संस्कारों में ही समावेशित हैं! यह कहने में भी कोई झिझक नहीं कि अनेक स्वघोषित साहित्यकार अभी उक्त विशिष्टताओं से दूर ही हैं! मुझे नहीं लगता कि इनमें से एक भी गुण के अभाव में हम साहित्यकार कहने या कहलाये जाने योग्य हैं! लेकिन, डॉ. विजेन्द्र पाल शर्मा अपने समग्र रूप में उन्हीं विशिष्टताओं के साथ सम्पूर्ण साहित्यकार हैं। स्मरण रखना चाहिए कि पाठक या श्रोता अंततः हमें हमारे व्यवहार से आँकता है, रचना द्वितीय चरण है और रचना यदि प्रथम हुई, तो भी व्यवहार अंतिम निर्णय का चरण!

डॉ. विजेन्द्र पाल शर्मा का कथा साहित्य मुझे उनके कहानी-संग्रह ''कर्फ्यू'' के रूप में वर्ष २०२२ में मिला और मैं उसकी समीक्षा कर पाया! दस उत्कृष्ट कहानियों के इस संग्रह की एक कहानी का अंश इस लेख के परिप्रेक्ष्य में देना समीचीन प्रतीत हो रहा है। कहानी ''संकल्प'' से पात्र गुरुजी का एक संवाद द्रष्टव्य है - ''किसी भी समाज की श्रेष्ठता उसकी सम्पदा, सोने-चांदी के भण्डारों से नहीं आंकी जा सकती। उसकी श्रेष्ठता का अनुमान ऊंची अट्टालिकाओं, विलासी रहन-सहन अथवा विज्ञान के पंखों पर सवार होने से नहीं लगाया जा सकता, अपितु उसकी समृद्धि का द्योतक उसका जीवन्त सदाचार होता है और सदाचरण का उदय होता है दृढ़ संकल्प से !'' पाठक इस अंश से स्वयं प्रसिद्ध शिक्षक रहे डॉ. विजेन्द्र पाल शर्मा के जीवन-दर्शन को समझ सकते हैं! संग्रह की सभी कहानियां इसी प्रकार एकाधिक सन्देश लिए हुए हैं, जो कथा लेखन में प्रायः कम पाये जाने वाला महत्त्वपूर्ण गुण है!

डॉ. विजेन्द्र पाल शर्मा सार्थक और प्रांजल काव्य के कवि हैं। उनका काव्य आत्मा से उपजा है। ऐसे काव्य दीर्घसूत्री नहीं होता, सूत्रमय होता है बस! उनके दो ''माहिया'' देखिए -

''हम प्रेम पुजारी हैं
कंस सामने हो
तो कृष्ण मुरारी हैं!'

××××××

''क्या करना उस धन का
चैन चुरा ले जो
कुंदन जैसे मन का!''

ये साधना और श्रेष्ठ जीवन के माहिया हैं ! शोध की दृष्टि से उनका एक शेर विश्लेषित करने का प्रयास करता हूँ ! शेर है -

''सुलगती धूप हो, साया न मिल पाए ज़माने में
चले आना, बड़ी ठंडक है, दिल के शामियाने में!''

धूप कैसी हो- ''सुलगती!'' जीवन जब विषम हो, उसमें साथ कितने चलते हैं भला, साया तक नहीं! शायर ''चले आना'' का प्रस्ताव देता है। चले आना, इसमें एक प्रगाढ़ निश्चिंतता है, जो किसी अन्य प्रस्ताव में नहीं हो सकती! विचारिए, ''दिल के शामियाने'' पर ! यहाँ 'दिल का आशियाना' भी हो सकता था, परंतु आशियाना एक परुष अथवा ''कठोर शब्द'' है, जबकि ''शामियाना'' कोमल! आशियाना में बाँध लेने का भाव होता, जबकि शामियाना में स्वतंत्रता है, चाहो, तो कुछ देर रुक, जा भी सकते हो! एक छाया है, एक स्नेह और विस्तार भी शामियाना में! शब्दों के प्रयोग की यह शक्ति किसी काव्य प्रशिक्षण केंद्र में जाकर नहीं सीखी जाती, शिव कृपा ही ऐसी काव्य प्रतिभा सौंपती है! पिछले दिनों उनका एक गीत सुन रहा था- ''काग़ज़ का भी मन होता है,'' सुधी पाठकों को उस तक जाना चाहिए!

मेरे संस्मरण-संग्रह ''पीले पन्नों से'' की समीक्षा से पूर्व डॉ. विजेन्द्र पाल शर्मा ने मुझे एकाधिक फोन कॉल्स कीं, उसकी प्रशंसा में, जिन्हें मैंने उनके आशीष समझे! कम साहित्यकार ही इतने संवेदनशील होते हैं। मेरा पुनः प्रश्न हैं कि क्या वे सच में साहित्यकार होते हैं?

इसी वर्ष फरवरी माह में, सहारनपुर से उनकी संस्था ''विभावरी'' का आमंत्रण मिला। समारोह से पूर्व उनके बार-बार के उनके घर आने के आग्रह और मेरे किसी के भी घर ना जाने के संकल्प के कारण, उनसे क्षमा मांगने के बाद कॉल पर उनके स्वर में शिशु जैसा - ''अच्छा डॉक्टर साहब, जैसी आपकी इच्छा! आते तो बहुत अच्छा लगता,'' यह सुनने के बाद मुझे स्वयं पर इतनी ग्लानि हुई कि संकल्प तोड़ दिया! वट वृक्ष एक सामान्य तरु को पुकार रहा था! एक संस्कारी परिवार से मिलना हुआ। यह सौभाग्य की बात है! मुझे घर से समारोह स्थल तक, उसी समारोह में सम्मानित करने से पूर्व तक, नहीं बताया कि वैसा होगा! समारोह दो पुस्तकों के विमोचन का था और मुझे उनमें से एक पुस्तक संबद्ध सारस्वत उद्‌बोधन के लिए बुलाया गया था। डॉ. विजेन्द्र पाल शर्मा का कुशल संचालन, श्रेष्ठ गायिकाओं को चुनने की उनकी क्षमता और उच्च्य सामंजस्य की स्मृतियों के संग मैं रुड़की लौटा!

राष्ट्रीय सप्ताहिक समाचारपत्र ''ओपन डोर'' में इस लेख के बहाने मैं अपने जीवन के सबसे श्रेष्ठ साहित्यिक व्यक्तित्व के विषय में लिख पाया, यह भी शिवकृपा ही हुई!

डॉ. विजेन्द्र पाल शर्मा हिन्दी साहित्य में सम्पूर्ण साहित्यिक संस्कारों से सम्पन्न एक महत्त्वपूर्ण, आदरणीय एवं अनुकरणीय साहित्यकार हैं !

(-रुड़की, उत्तराखंड व्हाट्सएप : ६४१२६५६३६१)

●

सन्त साहित्यकार डॉ.विजेन्द्र पाल शर्मा

मनु स्वामी

हिन्दी साहित्य को अपनी स्वर्णिम सृजनात्मकता से समृद्ध करने वाले पश्चिमी उत्तर प्रदेश के साहित्यकारों की एक अच्छी ख़ासी बड़ी सूची है। इनमें कुछ साहित्यकार ऐसे भी हुए हैं जिन्हें सन्त साहित्यकार की संज्ञा दिया जाना कोई अतिशयोक्ति नहीं होगी। इनमें विष्णु प्रभाकर और गिरिराज किशोर का नाम सर्वोपरि है। साहित्य में और जीवन में भी इनका संतत्व सहज ही देखा जा सकता है। दिवंगत होने के बाद उनकी इच्छा का सम्मान करते हुए उनका देहदान किया गया ताकि चिकित्सा विज्ञान के छात्रों के शोध कार्य में उसका सदुपयोग हो सके।

इन दोनों सन्त साहित्यकारों ने विपुल साहित्य रचा है। विष्णु प्रभाकर की कृति 'आवारा मसीहा' और गिरिराज किशोर की कृति 'पहला गिरमिटिया' ने उन्हें सहज ही साहित्य जगत में अमरता प्रदान कर दी है। आवारा मसीहा शरद चंद्र चटोपाध्याय की वृहद जीवनी है तो पहला गिरमिटिया महात्मा गांधी के दक्षिण अफ्रीका प्रवास पर केंद्रित वृहद जीवनीपरक उपन्यास है। यह सुखद संयोग है कि इन दोनों ही कालजयी साहित्यकारों की जन्मभूमि अपना जिला मुज़फ़्फ़र नगर है। ऐसी सन्त परम्परा को वर्तमान में आगे बढ़ाने वाले साहित्यकारों में डॉ. विजेन्द्र पाल शर्मा अग्रणी हैं। आपका जन्म दिनांक ६.७.१९५२ को जनपद मेरठ के ग्राम दौराला में हुआ। शुरुआती शिक्षा के उपरान्त आपकी शिक्षा दीक्षा मुज़फ़्फ़र नगर में हुई। यहाँ की गौरवशाली साहित्यिक परम्परा और परिवेश से प्रेरित होकर वह युवावस्था में ही साहित्य सृजन में रत हो गए थे। भक्ति गीत, कविता, गीत, कहानी और बाल साहित्य सहित अधिकाधिक विधाओं में उनका लेखन हुआ, जिसके फलस्वरूप 'आस्था के स्वर', 'काग़ज़ का भी मन होता है', 'उघड़ती हुई परतें', 'कर्फ्यू' आदि साहित्यिक कृतियों ने हिन्दी साहित्य को समृद्ध किया है। लगभग चार दशक की साहित्य-साधना में उन्होंने शब्द को काग़ज़ पर उकेरा ही नहीं है, जिया भी है। यही कारण है कि डॉ. शर्मा का सात्विक सान्निध्य मुज़फ़्फ़र नगर में मिले, या उनकी कार्यस्थली सहारनपुर में मिले, किसी तीर्थ यात्रा की अनुभूति से कम नहीं होता है।

बहुधा अधिकांश साहित्यकार अपने ही लेखन पर बात करते हैं, ख़ुश होते हैं। अन्य समकालीन साहित्यकार उनकी संकीर्ण सोच के दायरे से बाहर होते हैं। डॉ. विजेन्द्र पाल शर्मा इसके अपवाद हैं। अक्सर उन्हें दूसरे साहित्यकारों के लेखन, उनकी कृतियों पर बात करते हुए देखा जा सकता है। एक दो बार नहीं, न जाने कितनी बार मुझे अपने सामान्य लेखन पर भी उनकी मुक्त कंठ सराहना, आशीर्वाद मिला। हर बार मैं उनके प्रति कृतज्ञता से भरने के साथ अभिभूत भी हो जाता हूं।

संस्थागत स्तर पर भी शर्मा जी का अवदान उल्लेखनीय है। देश की प्रतिष्ठित साहित्यिक संस्थाओं में से एक विभावरी के वह संस्थापक सदस्य हैं। विभावरी को समसामयिक साहित्यिक गतिविधियों के अतिरिक्त समय समय पर सामाजिक कार्यों को करते हुए चार दशक से भी अधिक समय हो गया है।

किसी भी साहित्यकार के साहित्य में स्थापित होने के बाद की आदर्श स्थिति यह है कि उनकी जनमानस में भी पुख़्ता छवि बने। इस परिपेक्ष्य में अपने मुज़फ़्फ़र नगर के ही नामचीन शायर मुज़फ़्फ़र रजमी याद आते हैं जिनके एक शेर ने ही उन्हें उर्दू अदब की दुनिया में अमर कर दिया है। यह शेर देखिए-

ये जब्र भी देखा है तारीख़ की नज़रों ने
लम्हों ने ख़ता की थी सदियों ने सज़ा पाई।

साहित्य से सामान्य लगाव, जुड़ाव रखने वाला व्यक्ति भी इस शेर को जानता है, गाहे बगाहे रूटीन बातचीत में उल्लिखित भी करता है। भारत की संसद में ही नहीं, दुनिया के कितने ही मुल्कों की पार्लियामेंट में न जाने कितनी बार यह शेर कोट किया गया है और किया जाता रहेगा। तो यह किसी भी साहित्यकार के लिए आदर्श स्थिति है जब उसका सृजन उसके क़द से भी कहीं ऊँचा हो जाता है। बड़े से बड़ा सम्मान भी इसके सामने छोटा है। इसी क्रम में डॉ. विजेन्द्र पाल शर्मा का गीत 'काग़ज़ का भी मन होता है', रखा जा सकता है। देश के किसी भी कोने में शर्मा जी की बात हो तो इस गीत का ज़िक्र होना तय मानिए। वह किसी साहित्यिक आयोजन में अतिथि के रूप में मंच पर विराजमान हों और अपने संबोधन के लिए माइक पर आए तो श्रोताओं के बीच से काग़ज़ का भी मन होता है, की फरमाइश शुरू हो जाती है। अब उनके सामने यह समस्या उत्पन्न हो जाती है कि विषय पर वक्तव्य दें या गीत प्रस्तुत करें। बहरहाल वक्तव्य की शीघ्र ही औपचारिकता पूर्ण कर गीत पर आने को उन्हें विवश कर दिया जाता है और लीजिए मधुर स्वर में काग़ज़ का भी मन होता है, गूंज रहा है जिसमें अधिकाधिक श्रोताओं की आवाज़ भी शामिल होती है।

तो ऐसे सन्त साहित्यकार डॉ. विजेन्द्र पाल शर्मा शतायु हो और साहित्य की नित नई ऊँचाइयों का स्पर्श करें, ऐसी मेरी आशा और कामना है।

- ४६, अहाता औलिया, मुज़फ़्फ़र नगर (उ. प्र.)
मो. ९९९७७४९३५०

प्रेरक व्यक्तित्व : डॉ. विजेन्द्र पाल शर्मा

डॉ. एस के उपाध्याय

गंगा जब अपने उद्गम से निकल कर बहती है, तो बड़ी-बड़ी मगरूर शिलाओं को चकनाचूर करते हुए मार्ग में प्यासी धरती और प्राणियों को तृप्त करती हुई बहती जाती है। इसी प्रकार कुछ लोग भी इस धरती पर यदा-कदा जन्म लेते रहते हैं जो अपने सकारात्मक प्रयत्नों से समाज का कल्याण करने में जुटे रहते हैं। वैसे ही व्यक्तित्व के धनी हैं डॉ. विजेन्द्र पाल शर्मा।

मेरठ जनपद के दौराला गाँव में ६ जुलाई १९५२ को श्रमशील पिता पंडित सुक्खन लाल शर्मा और अतिशय धर्मपरायणा माता श्रीमती मंदरो देवी के घर जन्मे थे श्री विजेन्द्र पाल शर्मा ।

आपने इंटरमीडिएट करने के पश्चात घरेलू आर्थिक परिस्थितियों से बाध्य होकर पढ़ाई छोड़ दी और दौराला डिस्टीलरी में पहले अस्थाई कर्मचारी, तत्पश्चात पैकिंग सुपरवाइज़र के रूप में कार्य किया। १९७२ में आपने लिपिकीय संवर्ग में महाराज सिंह कॉलेज, सहारनपुर में प्रयोगशाला सहायक के रूप में नियुक्ति पायी। तत्पश्चात साहित्य, समाज और परिवार के दायित्वों का निष्ठा से निर्वहन करते हुए व्यक्तिगत रूप से बी.ए., एम.ए., पत्रकारिता का स्नातकोत्तर डिप्लोमा तथा पीएच-डी. की उपाधियाँ हासिल की और हिंदी शिक्षक बनने तक का रोमांचकारी सफर तय किया।

हम में से अधिकांश लोग इन्हें केवल साहित्यकार के रूप में ही पहचानते हैं किंतु कम ही लोग जानते हैं कि इनका एक विशिष्ट स्वरूप अत्यंत शालीन, सरल, सहज तथा समर्पित समाजसेवी और रंगकर्मी का भी है। नेतृत्व की अद्भुत क्षमता के धनी डॉ. शर्मा जीवन भर वंचितों के कल्याण हेतु कदम-कदम पर संघर्षरत रहे हैं।

अपने व्यक्तिगत अनुभवों तथा तथ्यों के आधार पर मैं यह कह सकता हूँ कि किसी विवाह समारोह में जाते समय सामान्य-सा दिखने वाला १७-१८ वर्ष का युवक, जो जून माह की आग उग़लती दोपहरी में जलते हुए रेलवे प्लेटफार्म से अपने साफ- सुथरे सफेद कुर्ते पजामे और विवाह समारोह की परवाह किए बगैर, पैरों से अपंग, लोगों से गुहार लगाते, मैल की परत चढ़े काले-कलूटे भारी भरकम भिखारी को बाहों में भरकर उत्साहपूर्वक रेलगाड़ी में चढ़ा सके, जो सहारनपुर नगर में रामनवमी के अवसर पर वर्ष १९९१ में कर्फ्यू के दौरान अपने दो मित्रों, डॉ. सुखवीर सिंह सैनी और श्री दिवाकर गुप्ता के साथ कई दिन तक ज़रूरतमंदों की सहायतार्थ मुफ्त आटा आलू, नमक बाँट सके, शाकंभरी मैया के दर्शन को जाने वाले पैदल यात्रियों के लिए कई वर्ष तक १०-१० दिवसीय भोजन शिवरों में तन-मन-धन से सार्थक भूमिका निभाए छात्र-छात्राओं की बेहतर शिक्षा व्यवस्था के लिए राजकीय बालिका उच्चतर माध्यमिक विद्यालय, सहारनपुर की अभिभावक अध्यापक एसोसिएशन के निरंतर ८ वर्ष तक अध्यक्ष रहते हुए स्कूल में बालिकाओं के लिए बस की व्यवस्था कराने के साथ-साथ, पीने के लिए स्वच्छ पानी, कक्षाओं के लिए शेड्स, प्रयोगशालाओं, शौचालयों का निर्माण कराने के लिए दिन-रात एक कर दे। विधायकों, सांसदों, मंत्रियों तथा प्रशासनिक अधिकारियों के माध्यम से जिनकी कोशिशों के फल स्वरूप वही राजकीय बालिका उच्चतर माध्यमिक विद्यालय, सहारनपुर इंटरमीडिएट तक उच्चीकृत हो सके, जिनके प्रबल विरोध के कारण लड़कियों की सुरक्षा को दृष्टि में रखते हुए विद्यालय की बाउंड्री पर दुकानें बनाने की जिला प्रशासन की सारी कोशिशें नाकाम रही हों, एस डी इंटर कॉलेज, सहारनपुर की अभिभावक अध्यापक एसोसिएशन के कोषाध्यक्ष पद पर रहते हुए जिन्होंने सक्रिय सहयोग देकर वहाँ कई कमरों तथा बरामदों के निर्माण में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई हो, छात्रों की सुरक्षा के

लिए जर्जर विद्युत तारों को बदलवाने, कई हैंड पंप लगवाने तथा शौचालय की मरम्मत कराने में सफलता पायी हो, जो विद्युत विभाग द्वारा पावर सप्लाई पर रोक लगा देने के कारण रोज कुआँ खोदकर पानी पीने वाले मज़दूर वर्ग के लिए आटा तक उपलब्ध न होने से क्षुब्ध होकर विद्युत अधिकारियों से संपर्क कर आटा चक्कियों को पावर सप्लाई प्रतिबंध से मुक्त करा सके, जो कुशल संगठन कर्त्ता के रूप में प्रदेश स्तर पर महत्वपूर्ण फ़ैसलों के अंतर्गत उत्तर प्रदेश के संपूर्ण शिक्षा जगत में कार्यरत वंचित कर्मचारियों के लिए सरकार से बोनस दिए जाने की स्वीकृति दिलाने में सफल रहे, जो १५ वर्ष चौधरी चरण सिंह विश्वविद्यालय, मेरठ से सम्बद्ध मेरठ, बागपत, गाजियाबाद, बुलंदशहर, शामली, मुज़फ़्फ़र नगर और सहारनपुर जनपदों के लगभग ६०० महाविद्यालयों की समन्वय समिति के संस्थापक -संयोजक रहते हुए हज़ारों कर्मचारियों, समस्त प्राचार्यों तथा शिक्षकों तक के लिए पारिश्रमिकों में कई -कई बार आशातीत बढ़ोतरी और कर्मचारियों के लिए अनेक अन्य सुविधाओं के साथ-साथ चिकित्सा हेतु कल्याण कोष की स्थापना कराकर ही दम ले और जो समाज कल्याण मंत्रालय के अंतर्गत संचालित आश्रम रीति विद्यालय, सहारनपुर जैसी कनिष्ठ शिक्षण इकाई के अल्प वेतन भोगी कर्मचारियों को तत्कालीन केंद्रीय समाज कल्याण राज्य मंत्री, डॉ. राजेंद्र कुमारी वाजपेई से उनके विशेष सचिव डॉ. धर्मपाल शर्मा के सहयोग से दिल्ली स्थित मंत्रालय में मिलवाकर विभागीय प्रशासन के अमानवीय शोषण से मुक्त कराकर ही विराम ले, जो सहारनपुर के निकटवर्ती गाँव सरखड़ी में हुए हिंदू मुस्लिम ख़ूनी संघर्ष को निडरता पूर्वक शांत करने के लिए मध्यस्थता निभाकर दोनों पक्षों में सोहार्द स्थापित करने के साथ-साथ जाति धर्म से ऊपर सोचने में मदद करे।

चलो यूँ कहते हैं कि कोई भी छोटी से छोटी समस्या बस नज़र में आ जाए तो शर्मा जी उसके समाधान में जुट जाते हैं। मुहल्ले में नाला खुला पड़ा है, बच्चों को उसमें गिरता देख, नगर निगम पहुँच जाते हैं और उसे सीमेंट के सलेब्स से ढकवा कर ही शांत होते हैं। स्वाभिमानी इतने कि आकाशवाणी नजीबाबाद में गीत के गाए जाने पर प्रतिबंध लगा देने से क्षुब्ध होकर प्रबल विरोध करते हैं, फलस्वरूप केंद्र को न केवल गायन से प्रतिबंध हटा देने पर विवश कर देते हैं बल्कि फ़रमान सुनाने वाले अधिकारी को भी अन्यत्र स्थानांतरण करवा कर ही छोड़ते हैं। आज भी कई राष्ट्रीय और प्रादेशिक सार्वजनिक समस्याओं के समाधान में जी- जान से जुटे हुए हैं डॉ. विजेन्द्र पाल शर्मा। देखने में समस्याएँ भले ही छोटी हों, लेकिन मानवीय सेवा की दृष्टि से अत्यंत महत्वपूर्ण हैं।

दरअसल मैं और डॉ. विजेन्द्र पाल शर्मा न केवल एक ही गाँव दौराला के हैं, अपितु हमारे परिवार भी एक दूसरे के बहुत ही निकट हैं, इतना ही नहीं, १६७२ से ये मेरे साथ महाराज सिंह कॉलेज, सहारनपुर में कार्यरत रहे हैं, तो यह कहने में भी मुझे किंचित संकोच नहीं है कि मैं इन्हें इनके बचपन से जानता हूँ। इन्होंने हमेशा जाति-पाँति, ऊँच-नीच, हिंदू-मुसलमान जैसी संकीर्ण विचारधारा की दीवारों को निडरता के साथ ध्वस्त किया है। जाट-ब्राह्मण बहुल गाँव में इनका सबसे पहला मित्र बना रईस अहमद और इनकी वह बचपन की दोस्ती आज भी पहले जैसी मासूम है। रईस के अतिरिक्त अन्य अनेक मित्र विभिन्न धर्मावलंबी तथा विभिन्न जातियों से से हैं जहाँ मानवीय संवेदनाओं ने वर्जनाओं के सारे अवरोध हटा दिए हैं। उनकी अधिकांश रचनाएँ इन्हीं पवित्र भावनाओं से ओतप्रोत हैं।

मुझे अपार हर्ष है कि ऐसे व्यक्तित्व के धनी डॉ. विजेन्द्र पाल शर्मा संगठन तथा सामाजिक सेवा के साथ-साथ साहित्य में भी गहरी पैठ रखते हैं। पिछले लगभग ४३ वर्षों से सहारनपुर की बहुआयामी संस्था विभावरी के माध्यम से डॉ. विजेन्द्र पाल शर्मा की सामाजिक, सांस्कृतिक एवं साहित्यिक सेवाएं सर्वविदित हैं। इनकी रचनाओं में भी अधिकांशतः वही है, जो इन्होंने जिया है।

आप एक आदर्श शिक्षक रहे हैं। आपने शिक्षा को सदैव व्यवहार से जोड़ा है। कक्षा में यदि आपने दहेज़ पर निबंध लिखवाया, तो विद्यार्थियों से स्वेच्छा पूर्वक लिखित में यह आश्वासन भी लिया कि वे न तो दहेज़ लेंगे और न दहेज़ देंगे । शर्मा जी का मानना है कि यदि मेरे एक विद्यार्थी ने भी अपना वादा निभाया, तो मेरा उद्देश्य पूरा हो जाएगा।

सहलेखन के आधार पर आपके भक्ति गीत संग्रह 'आस्था के स्वर' तथा कहानी संग्रह 'उघड़ती हुई परतें' तो प्रकाशित हुए ही, कीर्तिशेष श्री योगेंद्र पाल दत्त के साथ 'शाकंभरी मैया के द्वार' भक्ति गीतों की एक कैसेट भी समाज तक पहुँची। हिंदी साहित्य की विभिन्न विधाओं-गीत, ग़ज़ल, कविता, कहानी, समीक्षा, संस्मरण आदि की लगभग डेढ़ सौ से भी अधिक रचनाएँ प्रतिष्ठित पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित हो चुकी हैं। बच्चों के लिए 'नैतिक शिक्षा', २०१२ में इनके भावपूर्ण गीतों का संग्रह 'काग़ज़ का भी मन होता है' तथा २०१८ में आँचलिक भाषा में कहानी संग्रह 'कर्फ़्यू' सुधी पाठकों द्वारा ख़ूब सराहा गया है।

आप २५ वर्ष महाराज सिंह कॉलेज, सहारनपुर की वार्षिक पत्रिका 'सुमति' तथा कई काव्य संग्रहों-स्मारिकाओं के संपादक रहे, मासिक 'विस्तार बिंदु', मासिक 'राजनैतिक समाचार पत्रिका' में कई वर्ष काम किया तथा दैनिक हमारा फ़ैसला के उप संपादक के रूप में सेवाएँ दी।

सहारनपुर नगर में आपके संयोजन में विचार गोष्ठियाँ, काव्य गोष्ठियाँ, सेमिनार, कवि-सम्मेलन, विभिन्न साहित्यिक, सांस्कृतिक एवं सामाजिक विषयों पर प्रतियोगिताएँ, परिचर्चाएँ तथा यादगार कवि-सम्मेलन आयोजित होते रहते हैं। आप विभावरी 'काव्य कलश एक' तथा 'विभावरी काव्य कलश २०२३' के संपादक मंडल में शामिल रहे हैं।

मधुर कंठ के स्वामी डॉ. विजेन्द्र पाल शर्मा ने अपने रक्त रस-सिक्त गीतों से अनेक राज्यों में सहारनपुर को विशिष्ट पहचान दिलाई है। आकाशवाणी नजीबाबाद, मथुरा, जामिया मिलिया विश्वविद्यालय, दिल्ली के एफ एम चौनल तथा दूरदर्शन से प्रसारित आपके गीतों को खुले मन से सराहा जाता रहा है। आपके साहित्यिक अवदान के लिए उत्तर प्रदेश तथा उत्तर प्रदेश से बाहर अनेक संस्थाएँ विभिन्न अलंकरणों से आपका सारस्वत अभिनंदन कर चुकी हैं ।

मैं डॉ. विजेन्द्र पाल शर्मा के निरन्तर क्रियाशील रहने तथा नीरोग शतायु होने की कामना करता हूँ।

- पर्यावरणविद् एवं पूर्व अध्यक्ष, वनस्पति विज्ञान विभाग,
सहारनपुर
मो. - ६८३७०६४६२०, ६५५७११२१६५

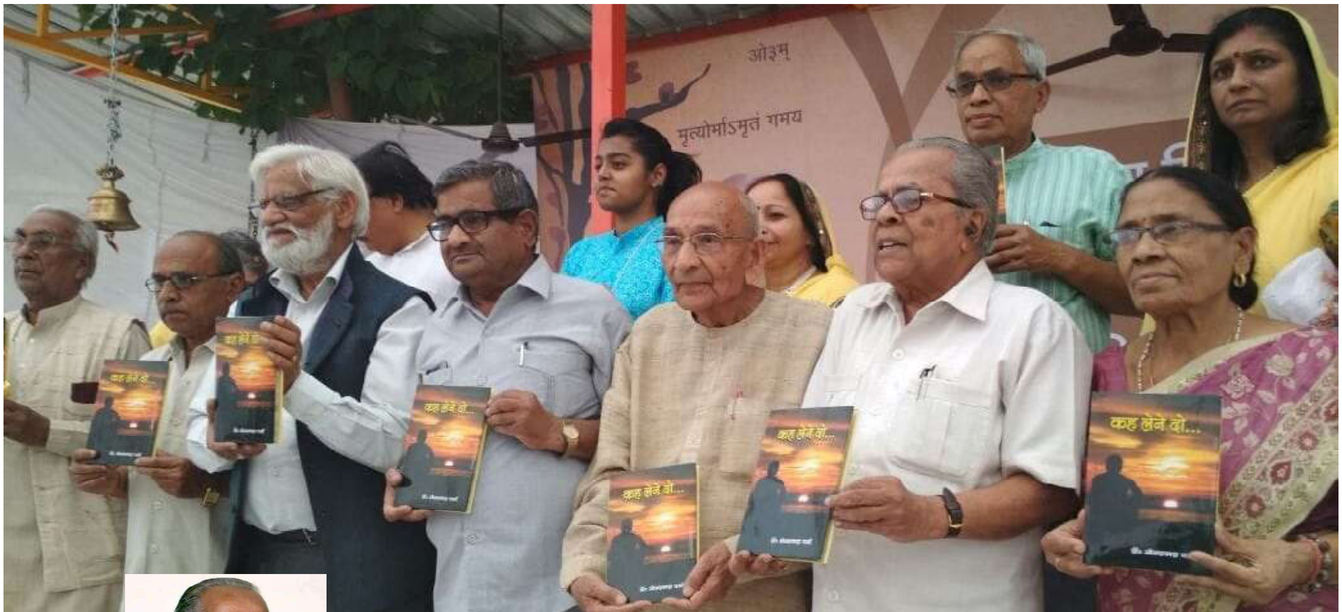

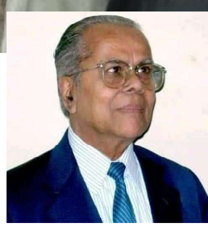

सरस्वती के साधक डॉ. विजेन्द्र पाल

निःसंदेह, डॉ. विजेन्द्र पाल के इस चिंतन ने ही उन्हें वह शक्ति दी है कि वे अपने गीतों, दोहों और माहियों में उस "प्यार" को भरकर सबके प्यार बन गए हैं और आज मैं हृदय की गहराइयों से अपने प्रिय डॉ. विजेन्द्र पाल शर्मा को अशेष मंगल कामनाएँ देते हुए उनके दीर्घायुष्य की प्रार्थना प्रभु से कर रहा हूँ।

डॉ. योगेन्द्र नाथ शर्मा "अरुण"

वाग्देवी माँ शारदा जब कृपा करती हैं तो वे अपने साधक को "अक्षर-साधना" का ऐसा दिव्य वरदान दे देती हैं, जो साधक को कालजयी बना देता है। युगों से अक्षर-साधक वाग्देवी का यह वरदान प्राप्त करके "काल के भाल" पर अपने हस्ताक्षर करते आ रहे हैं। ऐसे ही शब्द-साधकों में एक नाम मेरे परम प्रिय डॉ. विजेन्द्र पाल शर्मा का भी सम्मिलित हो गया है, जिसने अपनी मौन अक्षर-साधना से माँ शारदा की कृपा पाई है।

अपनी सहजता, सरलता और आत्मीयता से सबको अपना बना लेन वाले प्रिय डॉ. विजेन्द्र पाल को मैंने एक कुशल संचालक और मंच की शोभा बनकर श्रोताओं को मुग्ध करते देखा है। उनके गीतों की रस-माधुरी में डूबकर श्रोता जब काव्यामृत का पान करते हैं, तो लगता है कि समय भी कुछ पल के लिए जैसे ठहर जाता है।

डॉ. विजेन्द्र पाल को यह सौगात वस्तुतः उनके चिंतन और उस निरभिमान व्यक्तित्व से मिली है, जो उनके मन के इस विचार में ध्वनित हो रही है-

"शक्तिपुंज है शब्द इसे मत यूँ खोना
इसपर आधारित जग का हँसना-रोना
इसने धरा रक्त के कई बार धोई
इसके बीज प्यार की मिट्टी में बोना"

निःसंदेह, डॉ. विजेन्द्र पाल के इस चिंतन ने ही उन्हें वह शक्ति दी है कि वे अपने गीतों, दोहों और माहियों में उस "प्यार" को भरकर सबके प्यार बन गए हैं और आज मैं हृदय की गहराइयों से अपने प्रिय डॉ. विजेन्द्र पाल शर्मा को अशेष मंगल कामनाएँ देते हुए उनके दीर्घायुष्य की प्रार्थना प्रभु से कर रहा हूँ।

मैं गर्व से कह सकता हूँ कि मैंने उनके चिंतन में जो सरलता और आत्मीयता देखी है, वह सचमुच आज विरल हो गई है। निरभिमान काव्य-साधना में निरत डॉ. विजेन्द्र पाल के शब्द प्रायः मैं गुनगुनाया करता हूँ-

"तन धोने से क्या होता है
निर्मल मन बहुत ज़रूरी है
मत बन्द करो मन-वातायन
वातायन बहुत ज़रूरी है"

आज सबके लिए मन का वातायन खोलकर स्वागत करने वाले कितने हैं, जो दूसरों के लिए बेझिझक आगे आकर मददगार बनते हों? अपनी इसी भावना से शब्द-शिल्पी विजेन्द्र पाल ने सबके दिलों में जगह बनाई है और सभी का प्यार और सम्मान पाया है।

मैं तो अपने प्रिय डॉ. विजेन्द्र की इन पंक्तियों के दीवाना हूँ और मानता हूँ कि यही भावना उनकी प्राण-शक्ति बनी है-

"कुछ छन्द उन्हें अर्पित मेरे
जिनके पाँवों में छाले हैं
जो घोर विषमताओं में भी
मानवता के रखवाले हैं"

मानवता का रखवाला और छाले वाले पाँवों में अपने छन्दों को अर्पित करने वाला ही जन-जन के हृदयों में बसकर इस संसार का लाडला बनता है। मेरा प्रिय डॉ. विजेन्द्र पाल अपनी काव्य-साधना से जन-मन का लाडला बना रहे, यही मेरी मंगल कामना है।

(लेखक, महात्मा गाँधी अंतर्राष्ट्रीय हिन्दी विश्वविद्यालय, वर्धा (महाराष्ट्र), की सदस्य, कार्य परिषद में रह चुके हैं।)

●

झमाझम बरसे मेघ

इनमें सत्यता है, समालोचना है, आह्वान है, और मन को छू लेने का एक अद्भुत ढंग है।

विनोद 'भृंग'

वर्ष २००४ की बात है, जब माह जून और जुलाई में एक बूंद भी पानी नहीं बरसा था और सूखे के कारण चारों ओर त्राहि-त्राहि मची हुई थी। आकाश में दूर-दूर तक बादलों का कोई अदा पता न था। ऐसे में १ अगस्त २००४ को सहारनपुर के २२० के वी बिजली घर स्थित, मेरे निवास पर 'सावन- मनभावन' सरस काव्य गोष्ठी का आयोजन हुआ था। इसमें मेरठ से प्रख्यात गीतकार ग़ज़लकार श्री ओमकार गुलशन मुख्य अतिथि के रूप में शामिल थे। इस गोष्ठी में अन्य रचनाकारों के साथ वरिष्ठ गीतकार, डॉ. विजेन्द्र पाल शर्मा ने मुख्य अतिथि और अध्यक्ष से पूर्व जिस दर्द के साथ अपना एक गीत और मुक्तक पढ़ा, उसका स्मरण होते ही शरीर में आज भी स्फुरण अनुभव होता है

गीत के बोल थे-

घिर आओ घनश्याम, तुम्हारे पाँव पड़ूँ
आ न सको यदि मेरे आंगन,
लो मुझको निज धाम, तुम्हारे पाँव पड़ूँ

और मुक्तक-

जाने किस बंदीगृह में है
झूलों-मल्हारों का सावन
या भटक गया रिमझिम वाला
मौसम हरियाला मनभावन
अब सही नहीं जाती ईश्वर
धरती की पत्थराईं आँखें
रोता किसान भेजे कैसे
सिंधारा बिटिया के आंगन

तो गोष्ठी का समापन होते-होते न जाने कहाँ से आसमान में काले- काले मेघ घुमड़ आए और ख़ूब झमाझम बरसे।

हम सब हैरत में थे कि बादलों की लंबी चुप्पी और चिलचिलाती धूप के बाद अचानक बरसात कैसे हो गई। वहाँ उपस्थित सभी रचनाकारों ने डॉ. विजेन्द्र पाल शर्मा को उनके गीत और मुक्तक के लिए मुक्त कंठ से बधाई दी। उस दिन मुझे लगा की संवेदना में कितना बल है और यह भी अनुभव किया कि डॉ. विजेन्द्र पाल शर्मा के गीतों ग़ज़लों में सिर्फ संवेदना ही नहीं हैं, अपितु वे तो निश्चल प्रार्थना के स्वर ही हैं।

इनमें सत्यता है, समालोचना है, आह्वान है, और मन को छू लेने का एक अद्भुत ढंग है।

ऐसे सरल मन के सरस गीतकार हैं आदरणीय बड़े भाई बंधुवर शर्मा जी। आप लम्बे समय से सहारनपुर की साहित्यिक संस्था, विभावरी के सचिव हैं और एम एस कॉलेज, सहारनपुर से सेवानिवृत्त हुए हैं। विभिन्न साहित्यिक संस्थाओं से सम्मानित डॉ. विजेन्द्र पाल शर्मा को उनके अनुभवी सृजनात्मक योगदान के निमित्त सहारनपुर की प्रख्यात साहित्य संस्था समन्वय ने वर्ष २०१६ में सृजन सम्मान प्रदान कर अभिनंदन किया था। डॉ. शर्मा जी अपने वचन के पक्के और अपनी धुन के ऐसे धनी हैं कि न तो खुद झूठ बोलते हैं और न ही किसी की ग़लत बात का कभी समर्थन करते हैं। इसके साथ ही उन्हें जहाँ जाना होता है वहाँ किसी भी परिस्थिति में वह पहुँच जाते हैं। यह संस्मरण भी उनकी इसी भावना का प्रतीक है। डॉ. साहब को साइकिल चलाना बहुत प्रिय रहा है। कड़कड़ाती ठंड रही हो, या भीषण गर्मी, या फिर तेज बरसात, किसी भी मौसम में उनकी साइकिल की सेहत और शर्मा जी की समय से कहीं पहुँचने की स्पीड पर कभी कोई फर्क नहीं पड़ा।

मेरी स्मृतियों की धुंध में लिपटी हाड़ कँपा देने वाली सर्दी की एक ऐसी ही काव्य गोष्ठी जीवंत हो रही है, जिसमें पसीना-पसीना हो आए आदरणीय शर्मा जी साइकिल चलाकर वहाँ पधारे तो देखने वाला दृश्य था कि वहाँ उपस्थित सब के सब कवि और श्रोता बंधु जब अत्यधिक ठंड के कारण अपने हाथ बाँधे और बुक्कल मारे बैठे थे, तब डॉ. साहब वहाँ अपनी गरमा-गरम मुस्कान का जलवा बिखेरते हुए तशरीफ ला रहे थे। जहाँ तक मुझे याद है, उस दिन उन्होंने 'बाबा खड़े विचारें रे, बहुएँ हैं पर बूढ़ी अम्मा, बगड़ बुहारें रे' गीत को पहली बार लॉन्च किया था। गीत के भाव, भाषा, प्रवाह और उसकी आत्मीयता ने सबके बँधे हाथों की ठंड हवा कर दी थी। शर्मा जी के कंठ की मधुरता और नए गीत की शुरुआत के सम्मान में बजी तालियाँ आज तक मेरे कानों में गूँज रही हैं। आपकी विनम्रता को मेरा सादर प्रणाम ।

- राघव कुंज, ब्रह्मपुरी कॉलोनी, पेपर मिल रोड़, सहारनपुर २४७००१ मोबाइल ९०६८८६३५६५, ९७५ ८३५० २४७

मेरे भैया मेरे संरक्षक

मैं भाग्यशालिनी हूँ कि ईश्वर ने मुझे मेरे भाई के रूप में एक उत्कृष्ट साहित्य सर्जक, श्रेष्ठ गीतकार एवं मार्गदर्शक भी दिया।

वैसे तो भैया मुझसे केवल तीन वर्ष ही बड़े हैं तथापि मैंने सदैव उनमें एक पिता एवं शिक्षक की छवि को देखा है। वे मात्र मेरे भैया ही नहीं, अपितु मेरे मार्गदर्शक भी हैं।

उंगली पकड़ कर चलने से लेकर लिखने तक का सफर उन्हीं के मार्गदर्शन में तय किया। बचपन में जब पढ़ते समय कुछ समझ नहीं आता था, तब इतनी सरलता से समझाते थे कि फिर अन्य किसी से पूछने की आवश्यकता ही नहीं पड़ती थी। आज भी मेरी हर उपलब्धि का श्रेय उन्हीं को जाता है। जब तक पारस का स्पर्श न हो जाए, लोहा कंचन नहीं बनता। मेरी हर रचना को जब तक उनका आशीर्वाद नहीं मिलता, मैं संतुष्ट नहीं होती।

मैं भाग्यशालिनी हूँ कि ईश्वर ने मुझे मेरे भाई के रूप में एक उत्कृष्ट साहित्य सर्जक, श्रेष्ठ गीतकार एवं मार्गदर्शक भी दिया।

साहित्य के क्षेत्र में उन्होंने तभी कदम रख दिया था जब वह छठी कक्षा में पढ़ते थे। हम हतप्रभ रह गये थे जब हमने विद्यालय की मैगजीन में उनका गीत पढ़ा। माथे पर घुमावदार लट के साथ सुन्दर सी फोटो के नीचे गीत! अहा! आज भी याद है। हमारी ख़ुशी का ठिकाना न था।

इसके बाद जो सिलसिला चला, कभी नहीं थमा। स्कूल-कॉलेज के हर कार्यक्रम में भाग लेने, पुरस्कार अर्जित करने की झड़ी लग गई।

धीरे-धीरे लेखन परिपक्व होने लगा और कवि सम्मेलनों में भागीदारी होती रही। वर्तमान में गीत, ग़ज़ल, माहिया, दोहे, मुक्तक, कहानियाँ हर विधा में पारंगत, सृजन-यात्रा की अनेक सीढ़ियाँ सफलतापूर्वक चढ़ते हुए अनवरत शिखर की ओर अग्रसर हैं।

'काग़ज़ का भी मन होता है' श्रेष्ठतम् काव्य संग्रह है तो 'कर्फ्यू' उनका एक भावपूर्ण कहानी संग्रह जो ख़ूब चर्चित हुआ। अनेक साझा संकलनों में निरंतर सहभागिता रहती है।

मंच पर जब काव्यपाठ करते हैं, श्रोता मंत्रमुग्ध हुए बिना नहीं रहते। अनेक गीत ऐसे हैं, जो श्रोताओं तथा पाठकों के मन को आह्लादित करने में सफल हैं। उनमें से यहाँ पर मैं दो गीतों का विशेष ज़िक्र करना चाहूँगी जो मुझे अत्यधिक पसंद हैं।

x x x

'काग़ज़ का भी मन होता है।
हर क्षण मन में उल्लास भरे,
आशा का हार पिरोता है।'

x x x

एक ऐसा गीत, एक ऐसा विषय, जिस पर शायद ही किसी ने कलम चलाई हो।

इस गीत पर आपको पुरस्कृत भी किया गया है। एक दूसरा गीत जो मेरी ही नहीं बल्कि हर श्रोता की आँखें भिगो जाता है।

x x x

बेटियाँ चली गईं ससुराल ,
उनके सँग थे राजा -रानी,
उनके बिन कंगाल।
बेटियाँ! चली गईं ससुराल।।

x x x

इतना मार्मिक गीत! जिसे सुनकर श्रोताओं की आँखें हर बार गीली हुए बिना नहीं रहती। मैंने इस गीत को भैया के मुँह से जब भी सुना, मैं हिड़कियों से रोयी।

बहुत सारे गीत हैं जिनके विषय में लिखा जा सकता है।

समाज में फैली विकृतियों, परिवारों में उपेक्षित बुज़ुर्गों, कलुषित राजनीति, माँ, बेटियाँ, प्रकृति, सैनिक, गाँव-शहर, उत्सव, विरह-मिलन, संवेदना कोई ऐसा विषय नहीं, जिस पर सफलतापूर्वक लेखनी न चली हो।

जीवन के हर पहलू को समभाव से निभाते हुए निरंतर साहित्य की सेवा में तत्पर मेरे भैया के लिए ईश्वर से यही प्रार्थना है कि आप दीर्घायु एवं स्वस्थ रहें! माँ वाणी सदैव आप पर अपना नेह लुटाती रहें।

मैं आज जो भी हूँ आपके कारण हूँ! सदैव आपका आशीष भरा हाथ मेरे सिर पर रहे।

हार्दिक शुभकामनाओं के साथ!

छोटी बहन

सुशीला शर्मा 'सुवर्ण किंशुक'

संपर्क -सुशीला शर्मा
१७४/५ इंदिरा कालोनी, मुज़फ़्फ़र नगर
मो.नं ६४५७८३७८६४

डॉ. विजेन्द्र पाल शर्मा : जैसा मैंने जाना

एक प्रयोगशाला सहायक से शुरू महाविद्यालय की सेवा की यात्रा स्नातक को हिंदी साहित्य पढ़ाने तक पहुंची। आपके सेवाकाल में छात्रों, प्रबंध तंत्र, महाविद्यालय स्टाफ और विश्वविद्यालय में आपकी लोकप्रियता हर दिन बढ़ती रही।

डॉ. अनिल शर्मा 'अनिल'

सहज, सरल, सौम्य व्यवहार वाले, सरस गीतकार, सशक्त कहानीकार, संवेदनशील पत्रकार, अभिनेता, संस्कारित शिक्षक, सतत् क्रियाशील, संघर्षशील समन्वयक, समाजसेवी, सुसंस्कृत साहित्यकार आदि आदि। इतने सारे सकार विशेषणों के स्वामी डॉ. विजेन्द्र पाल शर्मा जी के व्यक्तित्व की एक और विशेषता है- संकोची स्वभाव (अपने बारे में, उपलब्धियों के बारे में चर्चा करने के सम्बंध में) शायद, १५ जुलाई २०२५ ही थी, मैंने फोन किया, 'अमन जी (संपादक- ओपन डोर) ने ओपन डोर का ७ अगस्त २०२५ का अंक आपके व्यक्तित्व और कृतित्व पर प्रकाशित करने की योजना बनाई है। आप हमें कुछ सामग्री उपलब्ध करा दीजिए।'

गुरु जी बोले, 'अरे अनिल जी मेरा इतना काम नहीं कि पत्रिका का अंक निकले। बहुत संकोच होता है मुझे यह सुनकर।'

'इसमें संकोच की क्या बात गुरु जी। आजकल लोग अपने ही द्वारा प्रायोजित परिशिष्ट निकलवा रहे हैं। हमने तो स्वतः संज्ञान लेकर यह निर्णय लिया है और आपको केवल अपनी रचनाएँ ही उपलब्ध करानी हैं।' मैंने कहा।

गुरु जी ने फिर दोहराया, 'संकोच होता है मुझे, बरसों पहले विभावरी संस्था के मित्रों ने अभिनन्दन ग्रन्थ की योजना बनाई थी परंतु मेरे संकोचवश वह भी अभी पूरी नहीं हुई।'

प्रसंगवश मैंने उन्हें बता दिया कि 'ओपन डोर' के संपादक अमन कुमार को, आपके व्यक्तित्व कृतित्व पर अंक निकालने के लिए मैंने ही कहा था। फिर कुछ और बातें हुई और बाद में 'अच्छा जैसी तुम लोगों की इच्छा' कहते हुए अपनी स्वीकृति प्रदान कर दी।

आपने रचनात्मक सहयोग किया। कई मित्रों ने आपके व्यक्तित्व पर आलेख लिखे। आपका एक साक्षात्कार भी हमें मिला। इनसे आपके बहुआयामी व्यक्तित्व की जानकारी मिली। इससे पहले तक आपको एक सरस गीतकार के रूप में ही जानता था। अनिल अभिव्यक्ति निकालते हुए जब कभी भी आपसे रचनात्मक सहयोग के लिए कहा, आपने गीत भेजे। कई बार आपको आकाशवाणी से सुना। सुमधुर गीतकार डॉ. विजेन्द्र पाल शर्मा जी को सुनते हुए मन भरता ही नहीं। मन चाहता है, सुनते रहें, सुनते रहें।

एक प्रयोगशाला सहायक से शुरू होकर महाविद्यालय की सेवा की यात्रा स्नातक कक्षाओं को हिंदी साहित्य पढ़ाने तक पहुंची। आपके सेवाकाल में छात्रों, प्रबंध तंत्र, महाविद्यालय स्टाफ और विश्वविद्यालय में आपकी लोकप्रियता हर दिन बढ़ती रही।(ऐसा बहुत कम देखने में आता है) डॉ. विजेन्द्र पाल शर्मा जी की रोचक शिक्षण शैली की चर्चा कक्षा से बाहर निकलकर पूरे महाविद्यालय में फैल गयी। इनकी अपनी कक्षाओं के अलावा अन्य कक्षाओं के छात्र भी चाहते थे कि वह शर्मा जी की कक्षा में बैठें।

इसके चलते कई बार कक्षा को कक्षा-कक्ष के बाहर महाविद्यालय में दूसरी जगह लगाया जाता। अपनी इस लोकप्रियता का शर्मा जी ने भी भरपूर फायदा उठाया। स्नातक कक्षाओं में साप्ताहिक, मासिक टेस्ट लेते। महाविद्यालय के छात्र कक्षाएं छोड़ने के लिए जाने जाते हैं, लेकिन इनके महाविद्यालय के छात्र इनकी कक्षा में शामिल होते और प्राथमिक कक्षाओं की तरह साप्ताहिक, मासिक टेस्ट भी सहर्ष देते। आपके प्राचार्य भी आश्चर्य करते कि शर्मा जी आप यह सब कैसे मैनेज कर लेते हैं।

अब आप भी आश्चर्य कर रहे हैं कि यह सब कैसे जाना मैंने। इस अंक की तैयारी के सिलसिले में समय समय पर हुए मोबाइल वार्तालाप में यह जानकारी मिली।

शर्मा जी की विभिन्न साहित्यिक उपलब्धियों में (५ अगस्त, २०२५) को ही एक महत्वपूर्ण उपलब्धि और जुड़ी है -

उत्तर प्रदेश साहित्य सभा की गीत प्रतियोगिता २०२५ में राष्ट्रीय स्तर पर हुई गीत प्रतियोगिता में डॉ. विजेन्द्र पाल शर्मा सहारनपुर को द्वितीय पुरस्कार प्राप्त हुआ। जबकि मयंक शर्मा, मुरादाबाद को प्रथम और प्रीति त्रिपाठी नई दिल्ली को तृतीय पुरस्कार प्राप्त हुआ। इस अखिल भारतीय प्रतियोगिता के निर्णायक थे सुप्रसिद्ध गीतकार डॉ. विष्णु सक्सेना, बलराम श्रीवास्तव, डॉ. राजीव राज, गजेंद्र प्रियांशु और डॉ. सोनरूपा विशाल। यहाँ यह भी उल्लेखनीय है कि इस प्रतियोगिता में २५० गीतकारों से अधिक ने प्रतिभाग किया था। जब फोन पर इस सम्बंध में बधाई देते हुए उक्त पुरस्कृत गीत हमें भेजने का मैंने अनुरोध किया तो गुरु जी ने कहा कि मैंने जीवन में कभी ऐसे आयोजनों में भाग नहीं लिया। वो तो हमारे एक मित्र ने इस प्रतियोगिता में गीत भेज दिया था। वास्तव में डॉ. विजेन्द्र पाल शर्मा जी का व्यक्तित्व और कृतित्व स्वयं में एक पाठशाला है, जहाँ से बहुत कुछ सीखा जा सकता है। आपके सुखी स्वस्थ और सक्रिय जीवन की मंगलकामनाओं सहित 'ओपन डोर' परिवार की ओर से हार्दिक बधाई। ●

स्वाभिमानी साहित्य साधक

अमन त्यागी जी उन्हें रोड़वेज तक बाइक से छोड़कर लौटे तो उन्होंने बताया कि डॉ. विजेन्द्र तो परशुराम के वंशज दिखाई देते हैं, इसीलिए वह आज की घटना से अत्यंत विचलित हैं।

इन्द्रदेव भारती

बात कई वर्ष पुरानी है। महाराज सिंह कॉलेज, सहारनपुर में सारस्वत सम्मान समारोह के आयोजन सम्बंधी कवि सम्मेलन था। मैं वहाँ एक गीतकार के रूप में आमंत्रित था। इस कवि सम्मेलन के संयोजक, संचालक और विशुद्ध साहित्यिक और श्रेष्ठ गीतों के रचनाकार के रूप में डॉ. विजेन्द्र पाल शर्मा जी से मेरा वह पहला परिचय था। तीन-चार घंटे के उनके सान्निध्य में उनकी अनेक छवियाँ देखने को मिलीं। सरल, सौम्य व्यक्तित्व, सीधा-साधा पहनावा, व्यर्थ के प्रदर्शन से दूर, मिलनसार, कुशल व्यवहारी, मिलते ही एक पल में अपरिचित को जैसे युगों का परिचित बना लेने की अद्‌भुत कला में निपुण और अत्यंत मृदुभाषी। तब विनम्रतापूर्वक, हँस कर स्वागत करने वाले मित्र के रूप में मैंने उन्हें देखा। फिर तो मिलने-मिलाने का तारतम्य बना रहा। सहारनपुर की समन्वय संस्था की कवि गोष्ठी हो या विभावरी साहित्यिक संस्था की गोष्ठी, अपने इन नए मित्र का निमंत्रण मिलता रहा। आना-जाना लगा रहा, प्रगाढ़ता बढ़ती गई। यूँ हमारा सम्बंध कब पारिवारिक स्वरूप में ढल गया, पता ही नहीं चला ।

इसी बीच उत्तराखंड की राजधानी देहरादून में आकाशवाणी केंद्र की स्थापना हुई, तो नजीबाबाद के आकाशवाणी केंद्र के स्टाफ के साथ-साथ इस केंद्र से जुड़े हुए कवि, शायर, वार्ताकार, कहानीकार, बाल गीतकार, गायक, वादक आदि भी देहरादून परिक्षेत्र में होने के कारण देहरादून के आकाशवाणी केंद्र से जुड़ गए। आकाशवाणी केंद्र देहरादून का परिसीमन निर्धारित होने से यहाँ के कलाकार वहाँ और वहाँ के कलाकार यहाँ अपना प्रस्तुतीकरण नहीं दे सकते थे। अतः नजीबाबाद केंद्र शून्यता की स्थिति में था। अब सहारनपुर, मुज़फ़्फ़र नगर, मेरठ, बुलंदशहर आदि जनपदों को जनपद बिजनौर में स्थित नजीबाबाद के आकाशवाणी केंद्र से जोड़ा गया। इन नए क्षेत्रों के कवियों, शायरों, गायकों संगीतकारों, कहानीकारों आदि को ढूँढने-बुलाने और आकाशवाणी केंद्र नजीबाबाद से जोड़ने के सूत्रपात में मैंने अपने तमाम प्रतिष्ठित मित्रों, परिचितों और उनके द्वारा ढूँढ- ढूँढ कर बताते गए कलाकारों को इस केंद्र से जोड़ने में अथक प्रयास किया। इन्हीं तमाम साहित्यकारों में वरिष्ठतम् श्रेष्ठ कवि डॉ. विजेन्द्र पाल शर्मा भी थे।

डॉ. विजेन्द्र पाल शर्मा अपनी विशिष्ट साहित्यिक काव्य प्रतिभा के बल पर शीघ्र ही आकाशवाणी केंद्र नजीबाबाद की पहचान बन गए। रिकॉर्डिंग के लिए आते-जाते उनका मेरी कुटिया में आकर दर्शन देना और एक-दो गीत सुनना- सुनाना मेरा सौभाग्य रहा। मैं और मेरी स्थानीय कवि मित्र मंडली उनके भावप्रवण गीतों के प्रशंसक बन चुके थे। किन्तु यह कैसी विडंबना कि जुलाई २०१८ की प्रातः जब मैं अपनी कवि कुटिया के बाहर सबमर्सिबल का बोरिंग करा रहा था, भाई डॉ. विजेन्द्र जी अचानक पधारे और बोले कि आज उनकी रिकॉर्डिंग है, लौटकर मिलता हूँ। तभी कुछ सुने-सुनाएँगे और चाय भी पियेंगे।

लगभग १:०० बजे डॉ. विजेन्द्र पाल शर्मा जी बड़ी क्षुब्ध अवस्था में हमारी कुटिया पर लौटे। उनके सौम्य मुखमंडल पर उस समय आक्रोश झलक रहा था। मैं समझ नहीं पा रहा था कि उन जैसे शांत व्यक्ति के साथ ऐसा क्या हुआ कि उनकी मुस्कुराती हुई आँखें लावा उगल रही थीं। मैंने उन्हें ठंडा जल पिलवाया तथा कुछ देर पश्चात वस्तु स्थिति जानने के लिए आग्रह किया, तो उन्होंने आकाशवाणी की वरिष्ठ कार्यक्रम अधिशासी श्रीमती मंजुला नेगी जी द्वारा किए गए निम्न स्तरीय व्यवहार तथा रिकॉर्डिंग की घटना सुनाई। डॉ. विजेन्द्र पाल शर्मा कह रहे थे कि वे और साहित्यकार होंगे, जो पद के मद में चूर अधिकारियों की बदसलूकी बर्दाश्त कर लेते होंगे, पर मैं श्रीमती नेगी को बताऊँगा कि साहित्यकार क्या होते हैं। खैर! तभी 'शोधादर्श' त्रैमासिक पत्रिका के संपादक और तत्कालीन 'परिलेख प्रकाशन' के स्वामी श्री अमन त्यागी जी किसी कार्यवश मेरी कुटिया पर पधारे। तब तक डॉ. शर्मा काफी संयत हो चुके थे, फिर भी श्री अमन त्यागी जी उन्हें रोड़वेज तक बाइक से छोड़कर लौटे तो उन्होंने बताया कि डॉ. विजेन्द्र तो परशुराम के वंशज दिखाई देते हैं, इसीलिए वह आज की घटना से अत्यंत विचलित हैं। शाम को ६-७ बजे के लगभग शर्मा जी का फोन आया कि वह ठीक से सहारनपुर पहुँच गए हैं और सोच रहे हैं कि इस घटना से हुए अपमान के विरुद्ध आवाज़ उठाई जाए क्योंकि यह मेरे नहीं समस्त साहित्यकारों के सम्मान का प्रश्न है। डॉ. शर्मा ने एक पत्र सूचना प्रसारण मंत्री, भारत सरकार के साथ-साथ आकाशवाणी नजीबाबाद और प्रसार भारती के उच्च अधिकारियों को सम्बोधित करते हुए लिखा, जिसकी छाया प्रति तीन-चार दिन बाद मुझे भी भेजी। उसका संक्षेप में आशय इस प्रकार था- आकाशवाणी केंद्र नजीबाबाद की कार्यक्रम अधिशासी, श्रीमती मंजुला नेगी जी के द्वारा मेरे

गीतों को पास करने के बाद मैंने रिकॉर्डिंग कक्षा में जाकर अपने गीतों की रिकॉर्डिंग कराई और रिकॉर्डिंग कर्त्ता की प्रशंसा के साथ जब श्रीमती मंजुला जी के कक्ष में उनका धन्यवाद देने के लिए पहुँचा और सम्पन्न होने की सूचना के साथ उनसे विदा होने की अनुमति चाही तो उन्होंने अपने कंप्यूटर पर मेरी रिकॉर्डिंग को सुना, तो तुरंत अभद्र भाषा में कहा, 'नहीं- नहीं, हमें गायकों की ज़रूरत नहीं है, गायकों को प्रमोट करने का काम मंचों तथा फिल्मों का है, आकाशवाणी का नहीं। यहाँ गीत तहत में पढ़े जाएंगे। आप फिर से जाकर तहत में पढ़ते हुए रिकॉर्डिंग कराएँ, मैंने उनसे कहा, 'आदरणीया! गीत का तो आकर्षण ही उसकी गेयता में है, तो उन्होंने फिर बड़े ही रूखे स्वर में और असभ्य तरीके से बोलते हुए कहा कि नहीं, तहत में ही पढ़ें, जो आकाशवाणी का नियम है। उनके द्वारा नियमों का हवाला देने के कारण मैंने तहत में पढ़ते हुए पुनः रिकॉर्डिंग कराई और पुनः उनके पास जाकर सूचना दी तो बोलीं, 'अच्छा ! अब ठीक किया, वरना जो हमारे निर्देश पर नहीं चलेगा, उसको बाय-बाय, टाटा, थैंक यू। उस समय दो सम्भ्रांत महिला कलाकार भी अपनी रिकॉर्डिंग के लिए वहाँ उपस्थित थीं। श्रीमती नेगी जी का बोलने का तरीका इतना ख़राब था कि जैसे मैं एक वरिष्ठ कवि न होकर उनका नौकर हूँ। बोलते समय श्रीमती नेगी की भाव-भंगिमा विकृत हो रही थी। डॉ. शर्मा ने आगे लिखा कि साहित्य, कला, संगीत आदि की सर्वोच्च संस्था, प्रसार भारती के नजीबाबाद केंद्र में पधारे कलाकारों के साथ ऐसा दुर्व्यवहार आश्चर्य जनक और असहनीय था। उन्होंने आगे लिखा कि यदि श्रीमती मंजुला नेगी जी का आदेश संवैधानिक और आकाशवाणी के नियमानुकूल था, तो राष्ट्रगान और राष्ट्रगीत भी तहत में पढ़े जाने चाहिएँ। साथ ही, इस केंद्र पर काव्य पाठ करने के लिए आने वाले सभी कवियों, गीतकारों को अपने गीत गाने के स्थान पर तहत में पढ़ने के निर्देश के साथ ही बुलावा भेजा जाना चाहिए। इस संदर्भ में मैं स्वयं भी तत्कालीन केंद्र निदेशक श्रीमती मनदीप कौर चड्ढ़ा जी से मिला और सारे प्रकरण पर उनसे विचार-विमर्श किया। उन्होंने प्रभावी कार्रवाई किए जाने का आश्वासन दिया और कवि मित्र डॉ. विजेन्द्र पाल शर्मा जी को पहुँची पीड़ा के लिए एक खेद पत्र भी प्रेषित किया। बाद में मुझे डॉ. विजेन्द्र पाल शर्मा ने बताया कि कार्यक्रम अधिशासी इससे पूर्व भी कई कवियों के साथ यही निंदनीय व्यवहार कर चुकी हैं, जिनमें अंतरराष्ट्रीय कवि और गीतकार भी शामिल हैं, लेकिन वे सभी तहत में रिकॉर्डिंग कराकर चुपचाप चले गए। परंतु सदैव अन्याय के विरुद्ध खड़े रहने वाले डॉ. विजेन्द्र पाल शर्मा ने सिद्ध कर दिया कि व्यक्ति के मान-सम्मान के सामने सारे पदक झूठे हैं और अभिनंदन अधूरे।

अंततः शीघ्र ही शर्मा जी द्वारा लिखे शिकायती पत्रों पर विभागीय कार्रवाई सम्पन्न हुई और उक्त अधिकारी के स्थानांतरण आदेश आकाशवाणी केंद्र, नजीबाबाद को प्राप्त हुए। इस बीच उन्होंने विभिन्न स्रोतों से डॉ. विजेन्द्र पाल शर्मा से संपर्क करना चाहा, परन्तु सफल नहीं हो सकीं। स्थानांतरण रुकवाने के लिए की गई भागदौड़ को विभाग द्वारा नकार दिया गया। बहरहाल! सत्य की जीत हुई और अहंकार को अकेले मुँह छुपाकर भागना पड़ा।

अन्त में इस महाभारत के विजेता, डॉ. विजेन्द्र पाल शर्मा जी के स्वास्थ्य, सुखी और स्वाभिमानी जीवन की मंगल कामना करता हूँ।

– ए/३-आदर्श नगर, नजीबाबाद-२४६७६३(उ प्र) सचलभाष-९९२७४०१११९

डॉ. विजेन्द्र पाल शर्मा जी के लिए कुछ विद्वानों के विचार

– प्रिय विजेन्द्र जी! आपकी पुस्तक अभी-अभी मिली। शुरू के केवल तीन चार गीत पढ़ते ही आपको शुभकामनाएं देने का लोभ संवरण नहीं कर सका। इतने उत्कृष्ट संकलन के लिए बहुत-बहुत आशीर्वाद। विस्तार से बाद में लिखूंगा।

-गोपालदास 'नीरज' (अलीगढ़)

– डॉ. शर्मा! आपकी भाव सम्पदा चमत्कृत करती है।

-सोम ठाकुर (आगरा)

– गीत का गुण है मन्त्रमुग्धता, मन्त्रमुग्धता अवस्था है आत्मा में स्थित हो जाना, आत्मा में स्थित हो जाने का अर्थ है भौतिक जगत से दूर हो जाना, सुधबुध खो बैठना, कुछ वैसी ही स्थिति इन गीतों को सुनने से हो जाती है।

-डॉ. योगेन्द्र नाथ शर्मा 'अरुण' (रुड़की)

– शब्दाडम्बर से अछूते इन गीतों के पावन दीप हमेशा मर्यादा की रोशनी फैलाते रहेंगे।

-कृष्णकान्त 'अक्षर' (फर्रुखाबाद)

– देश और समाज की वर्तमान दशा से चिन्तित कवि ने अत्यन्त सहजता से निष्ठावान साहित्यकार के दायित्व का निर्वहन किया है।

-दिनेश कुमार 'दिनेश' (शिवालिक नगर)

– विजेन्द्र जी के गीतों को जब-जब सुना, लगा ये गीत तो वही सब कुछ कह रहे हैं जो आम आदमी भोगता है, सोचता है, चाहता है। इन गीतों को जीवन के इतना निकट पाकर श्रोता भाव-विभोर हो जाते हैं।

-कृष्ण मित्र (गाजियाबाद)

– डॉ. विजेन्द्र पाल शर्मा जी के व्यक्तित्व और कृतित्व से मैं बहुत प्रभावित रहा हूँ। इनके स्वभाव की सरलता इनके गीतों-ग़ज़लों में उतर आया है। जिसने इनकी रचनाएँ सुनीं; वह इन्हीं का होकर रह गया है।

-डॉ. अजय जनमेजय (बिजनौर)

– जिस तरह गंगा में डुबकी लगाने से तन-मन का ताप उतर जाता है उसी तरह डॉ. विजेन्द्र पाल शर्मा के गीतों के बोल कानों में पड़ते ही आत्मा तृप्त हो जाती है।

-रमेश 'रमन' (हरिद्वार)

– डॉ. विजेन्द्र पाल शर्मा के गीत जीवन-मूल्यों के विलक्षण मन्त्र हैं।

-सुरेश 'सपन' (सहारनपुर)

– भइया के गीतों ने न जाने कितने नवोदित रचनाकारों का मार्गदर्शन किया है। मैं भी उनमें से एक सौभाग्यशालिनी हूँ।

-सुशीला शर्मा (मुज़फ़्फ़र नगर)

– 'क़ाग़ज का भी मन होता है' यदि केवल यह अकेला गीत ही इस पुस्तक में होता, तो पुस्तक सम्पूर्ण कहलाती।

-कश्मीर सिंह (भटिण्डा)

– पिछले २०-२५ वर्ष से प्रतिदिन उषाकाल में प्रिय विजेन्द्र का यह गीत 'तन धोने से क्या होता है, निर्मल मन बहुत ज़रूरी है', बरबस ही मेरे होठों पर आ जाता है। गीतों में ऐसी शाश्वतता वास्तव में दुर्लभ है।

-डॉ. सुखवीर सिंह सैनी (सहारनपुर)

स्वस्तिवाचन जैसा है डॉ. विजेन्द्र पाल शर्मा का साहित्य

डॉ. शर्मा की जितनी भी काव्य रचनाएँ हैं, वे साहित्य शिल्प की कसौटी पर खरी उतरती हैं। उन्होंने प्रायः सभी काव्य-रूपों में सृजन किया है, किंतु गीत, ग़ज़ल, मुक्तक, माहिया, दोहे आदि उनकी प्रिय विधाएं हैं। इसके साथ ही समीक्षा एवं संस्मरण विधा पर उनका लेखन स्वागतयोग्य है। इन सबके बीच उन्होंने कहानी विधा में सशक्त उपस्थिति दर्ज करायी है। उनकी अनेक कहानियाँ विभिन्न पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित हुई हैं, किंतु उनके कहानी-संग्रह 'कर्फ्यू' को हिंदी साहित्य जगत में पर्याप्त सराहा गया है।

डॉ. विपिन कुमार गिरि

जीवन- यात्रा में ७३ वसंत देख चुके अत्यंत आत्मीय एवं कुशल रचनाशिल्पी आदरणीय डॉ. विजेन्द्र पाल शर्मा का जीवनानुभव विलक्षण है। सादगी से जीवनयापन करने वाले डॉ. शर्मा से मेरा परिचय लगभग दो दशक का है। लगभग २२ वर्ष पूर्व जब मैं सहारनपुर आया तो उस समय साहित्यिक एवं सांस्कृतिक गतिविधियों की संवाहक संस्थाओं से जुड़े अनेकानेक महानुभावों से मेरा परिचय हुआ। इन सबमें भी मुझे आत्मीयता और साहित्यिकता से परिपूर्ण व्यवहार डॉ. शर्मा का मिला। डॉ. शर्मा एक साधारण से गाँव से निकले और फिर सहारनपुर आकर यहाँ के परिवेश में इतना रच-बस गये कि उन्होंने इस क्षेत्र को अपने जीवन का कर्मक्षेत्र ही बना लिया।

डॉ. शर्मा के जीवन के अनेकानेक आयाम हैं। एक प्रतिष्ठित महाविद्यालय में सेवारत रहते हुए उन्होंने अपनी सामार्थ्यानुसार समाज में अपने कार्यों से सार्थक उपस्थिति दर्ज करायी। 'विभावरी' संस्था तो एक माध्यम थी, वस्तुतः मानवीय संवेदना उनके जीवन का सामान्य व्यवहार रहा। किसी भी समय किसी के साथ खड़े होना, उनके व्यवहार की पहली पहचान है। अपनी बात को किस तरह कहना है और उसको किस तरह मनवाना है, यह कला अगर सीखनी है तो डॉ. विजेन्द्र पाल शर्मा जी से बेहतर उदाहरण कोई नहीं हो सकता। अपने अनुभव के आधार पर मैं कह सकता हूँ कि उनमें यह जादूगरी मैंने कई बार देखी है। इसीलिए प्रो. वसीम बरेलवी का यह शेर उनकी कला पर पूरी तरह खरा उतरता है-

कौन-सी बात कहां कैसे कही जाती है।
ये सलीका हो तो हर बात सुनी जाती है।।

शर्मा जी के जीवन की विशेषता है-चरैवेति-चरैवेति और इसी मूल मंत्र को उन्होंने अपने जीवन में आत्मसात किया है। मैंने जीवन में मिले असंख्य लोगों के समीप जाकर अनुभव किया है कि वे प्रायः जीवन में असंतुष्ट ही दिखायी दिये, लेकिन इस दृष्टि से डॉ. शर्मा इसका अपवाद हैं। जीवन में तृप्ति का जो भाव उनके जीवन में मिला, वह अन्यत्र दुर्लभ है। इसी कारण घर-परिवार और समाज ही नहीं, अपने सर्जनलोक में भी उनकी अलग ही दुनिया है। अपनी सेवानिवृत्ति से पहले ही नहीं, बल्कि बाद के वर्षों में भी वे उतने सजग, सक्रिय और ऊर्जा से भरे हैं। सहारनपुर या आसपास होने वाले न जाने कितने आयोजनों में उनकी सक्रिय और सार्थक उपस्थिति प्रायः रहती है। अपने काव्य-संग्रह 'काग़ज़ का भी मन होता है' में 'आत्माभिव्यक्ति' में वे लिखते हैं- ''मैंने जिस ग्रामीण परिवेश में जन्म लिया, वहाँ कुश्ती, कबड्डी या लंबी-ऊँची कूद जैसे खेल ही मर्दों के

लिए मान्य थे। गीत गाना, गुनगुनाना, यहाँ तक कि खुलकर हंसना तक बेहयाई और मिरासीपने की निशानी थी। परंतु क्या करता, लेखन, गायन और अभिनय में मेरी रुचि बचपन से ही थी।''

अभिप्राय यह है कि उनमें कलात्मक वृत्ति प्रारंभ से ही थी, जिसे पल्लवित-पुष्पित होने का भरपूर अवसर सहारनपुर में मिला। महाविद्यालय के विभिन्न दायित्वों का सफलतापूर्वक निर्वाह्न करते हुए उनकी एक बाहरी दुनिया भी रही, जिसमें उनका मन रमता है। सामाजिक सरोकारों के साथ-साथ अपनी रचनायात्रा को भी वे धीरे-धीरे तय करते रहे। एक बार जब उनके संपूर्ण रचनाकर्म पर पूछा गया तो वे बोले- ''मैंने क्या कुछ लिखा भी है?''

वस्तुतः यह उनकी सदाशयता है। उन्होंने साहित्य की दुनिया में प्रवेश करते हुए प्रायः सभी विधाओं-काव्यरूपों में हाथ आजमाये हैं। यह अलग बात है कि उनके रचना संसार में प्रकाशन की कोई लंबी फेहरिस्त नहीं हैं, लेकिन इतना मैं पूरी गंभीरता के साथ कह सकता हूँ कि उन्होंने जो कुछ रचा, वह बेजोड़ है। मेरी इस स्वीकारोक्ति का प्रमाण भाई कश्मीर सिंह ने भी दिया है। उन्होंने लिखा है- ''काग़ज़ का भी मन होता है'' यदि केवल यह अकेला गीत ही इस पुस्तक में होता, तो भी पुस्तक संपूर्ण कहलाती।'' निश्चित रूप से कहा जा सकता है कि डॉ. शर्मा जी ने जो रचा, अनूठा रचा।

उनके काव्य-कौशल से अभिभूत भाषाविद् और साहित्यकार प्रो. योगेश छिब्बर ने दो प्रसंग उद्धृत किये हैं। प्रथम प्रसंग में उनके कालजयी गीत 'बेटियाँ चली गयीं ससुराल' का उल्लेख करते हुए प्रो. छिब्बर ने लिखा- ''भाव-विभोर होना क्या होता हैं, मैं इसी गीत के माध्यम से जान पाया हूँ।'' दूसरा प्रसंग, वे एक ग़ज़ल का देते हैं। डॉ. शर्मा ग़ज़ल प्रस्तुत कर रहे हैं- ''हमारे गाँव में ऐसा नहीं था....।'' सभागार मंत्रमुग्ध है। प्रो. छिब्बर उस दृश्य से भाव-विभोर होकर लिखते हैं- ''डॉ. शर्मा की यह ग़ज़ल अक्सर सामूहिक रूप से पढ़ी जाती है। श्रोताओं को इस तरह अपने साथ जोड़ लेने वाला कवि वस्तुतः जन-जन का कवि है....।''

वस्तुतः डॉ. शर्मा की जितनी भी काव्य रचनाएँ हैं, वे साहित्य शिल्प की कसौटी पर खरी उतरती हैं। उन्होंने प्रायः सभी काव्य-रूपों में सृजन किया है, किंतु गीत, ग़ज़ल, मुक्तक, माहिया, दोहे आदि उनकी प्रिय विधाएं हैं। इसके साथ ही समीक्षा एवं संस्मरण विधा पर उनका लेखन स्वागतयोग्य है। इन सबके बीच उन्होंने कहानी विधा में सशक्त उपस्थिति दर्ज करायी है। उनकी अनेक कहानियाँ विभिन्न पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित हुई हैं, किंतु उनके कहानी-संग्रह 'कर्फ्यू' को हिंदी साहित्य जगत में पर्याप्त सराहा गया है।

निरंतर सर्जन में संलग्न डॉ. शर्मा के रचना संसार को देशभर के साहित्य-रसिकों द्वारा सराहा गया है और सम्मानित किया गया है। देश-प्रदेश की अनेकानेक संस्थाओं ने उनकी रचनाधर्मिता को उल्लेखनीय मानते हुए सम्मानित किया है, जिसकी लंबी सूची है।

प्रसिद्ध गीतकार रमेश 'रमन' ने उनके गीतों को सराहते हुए लिखा है- 'जिस तरह गंगा में डुबकी लगाने से तन-मन का ताप उतर जाता है, उसी तरह डॉ. विजेन्द्र पाल शर्मा के गीतों के बोल कानों में पड़ते ही आत्मा तृप्त हो जाती है।'' इसी तरह सहारनपुर के शब्द शिल्पी सुरेश 'सपन' ने उनके गीतों को जीवन-मूल्यों का विलक्षण मंत्र बतलाया है।

वास्तविकता यह है कि सच्चे अर्थों में उनका संपूर्ण रचना-संसार भोगे गये यथार्थ का पर्याय है और पावन मंत्र जैसा है। इसीलिए विधा तो एक बहाना बन जाती है, सच्चाई यह है कि उनकी विलक्षण रचनात्मकता से प्रत्येक रचना अद्भुत और अलौकिक बन जाती है। ऐसा लगता है कि जैसे उनकी रचना की एक-एक पंक्ति 'स्वस्तिवाचन' का पर्याय बन गयी हो।

डॉ. शर्मा का जीवन और सर्जन यशस्वी हो-ऐसी कामना है।

पता- ६/४०८४, भारद्वाज गली, पुराना माधव नगर, सहारनपुर-२४७००१ सचलभाष- ६८३७३६१७२८

साक्षात्कार

डॉ. विजेन्द्र पाल शर्मा से डॉ. अनीता भारद्वाज 'अर्णव' का वार्तालाप

अर्णव– कृपया आप अपना संक्षिप्त परिचय देते हुए स्वयं को विस्तार से परिभाषित कीजिए।

डॉ. विजेन्द्र पाल शर्मा– मेरा जन्म मेरठ जनपद के गाँव दौराला में एक सामान्य परिवार में ६ जुलाई १९५२ को हुआ। मेरे पिताजी का नाम पंडित सुक्खन लाल शर्मा और माता जी का श्रीमती मंदरों देवी था। जहाँ तक प्रश्न है स्वयं को परिभाषित करने का, तो यह बड़ा दुष्कर कार्य है, क्योंकि मनुष्य के व्यक्तित्व को केवल समाज ही परिभाषित कर सकता है, वह स्वयं नहीं ।

अर्णव– आपने जीवन के विभिन्न रूप देखे हैं, क्या कोई नया रूप है, जिसे आप देखना पसंद करेंगे?

डॉ. विजेन्द्र पाल शर्मा– वह रूप जिसमें छद्म न हो, अनावश्यक संचय के लिए आत्मा का हनन न हो, दिखावा न हो, वह रूप, जिसमें नेताओं से लेकर नौकरशाहों तक, चिकित्सकों से लेकर सुरक्षाकर्मियों तक, सामान्य जन से धर्म गुरुओं व साहित्यकारों और शिक्षकों तक प्रत्येक भारतवासी अपने दायित्व का निष्ठापूर्वक निर्वहन करे।

अर्णव– किस परिवेश में आप सबसे अधिक सहज होते हैं?

डॉ. विजेन्द्र पाल शर्मा– जहाँ राजा भोज और गंगू तेली का समान रूप से स्वागत किया जाता हो।

अर्णव– आपके मन में साहित्य के प्रति लगाव कैसे उत्पन्न हुआ?

डॉ. विजेन्द्र पाल शर्मा– मैं कक्षा ६ में था, जब एक दिन हमारे संस्कृताचार्य जी ने विद्यालय पत्रिका में प्रकाशन हेतु कुछ लिखने के लिए प्रोत्साहित किया। फलस्वरूप यह छोटी सी कविता लिखी गई –मेरी वाणी से निकले राम, जो हैं बहुत ही शक्तिमान, जिन्होंने कूटकर भर दिया ज्ञान, जिनके लिए हुए पानी में, सब करते लोग स्नान..। फिर तो प्रत्येक वर्ष विद्यालय पत्रिका में लेख अथवा कविता प्रकाशित होने लगीं। वर्ष १९६५ में जब भारत पाकिस्तान के बीच युद्ध हुआ तब मैं मुज़फ़्फ़र नगर दसवीं कक्षा का विद्यार्थी था और अपने गाँव दौराला से प्रतिदिन रेलगाड़ी में आता- जाता था। स्टेशन पर प्रायः उत्साही सैनिकों से भरी रेलगाड़ियाँ सरहद की तरफ़ और उधर से कभी-कभी घायल सैनिकों को लेकर दिल्ली की तरफ़ जाती थीं। मुज़फ़्फ़र नगर गुड़ मंडी, जिसे नई मंडी भी कहते हैं, के धर्मपरायण व्यापारी उन्हें दौड़-दौड़ कर चाय और डबल रोटी दिया करते थे, जिनकी सेवा में हम लोग भी हाथ बँटाते थे। एक दिन मैंने एक घायल सैनिक से पूछा कि अब क्या इरादा है? तो उसने चाय का कुल्हड़ पकड़ते हुए कहा, 'इरादा क्या, ठीक होते ही दुश्मन के दाँत खट्टे करने के लिए फिर लौटेंगे।' बस उसी रात मेरे जीवन का पहला गीत- माँ से कहना, लाल तेरा, इस जहाँ से जा रहा है। भाल पर सिलवट न कोई, फूल-सा मुस्का रहा है।। काग़ज़ पर उतर आया। इसके पश्चात तो गीत, ग़ज़ल, कहानी, संस्मरण, समीक्षा आदि की भिन्न-भिन्न धाराएँ बह निकली।

अर्णव– क्या साहित्य सर्जन के अतिरिक्त भी आपकी कुछ अभिरुचियाँ हैं?

डॉ. विजेन्द्र पाल शर्मा– हाँ, मुझे बचपन से ही अभिनय और गायन का भी शौक रहा है। मैं जिस भी स्कूल- कॉलेज में पढ़ा, वहाँ अभिनय, गायन, भाषण और वाद -विवाद प्रतियोगिताओं में अधिकांशतः प्रथम स्थान ही पाया

अर्णव– इस क्षेत्र में कोई रोचक घटना हो तो कृपया साझा कीजिए ।

डॉ. विजेन्द्र पाल शर्मा– अर्णव जी! हमारे गाँव दौराला में वृहद स्तर पर रामलीला का मंचन होता था, जिसमें हज़ारों की संख्या में दर्शक इकट्ठे होते थे। तब मैं कक्षा सात में था। मेरे गुरु, श्री रामफल जी रामलीला में संगीत दिया करते थे। उन्होंने मुझे शत्रुघ्न का रोल दिलवा दिया और समझा भी दिया कि जब ननिहाल से लौटने पर मन्थरा से तुम्हारा वार्तालाप होगा तब उसके पीछे जोर से लात मारना, जिससे वह गिर पड़े। मैंने वैसा ही किया। मन्थरा जो बने थे वह रामलीला के निर्देशक भी थे। वे लड़खड़ा कर मंच पर धड़ाम से गिरे और गिरने पर उनके मुँह पर चोट आयी। उन्होंने मंच पर तो कुछ नहीं कहा, लेकिन जैसे ही पर्दा गिरा, उन्होंने एक झन्नाटेदार थप्पड़ मेरे गाल पर रसीद कर दिया। मैं रोने लगा और रोते-रोते उन्हें बता दिया कि मुझे तो गुरुजी ने कहा था। बस फिर क्या था, नेपथ्य में ही शुरू हो गया राम रावण युद्ध। एक घटना मुझे और याद आती है। दरअसल मेरे पिताजी शारीरिक खेलों को महत्व देते थे और गाने बजाने को मिरासियों का काम समझते थे। वह मेरे किसी भी पुरस्कार को देखकर खुश नहीं होते थे। कक्षा १२ पास कर लेने के बाद उन्होंने मुझे दौराला शुगर मिल में अस्थाई कर्मचारी के तौर पर लगवा दिया। वे वहाँ सीनियर फिटर थे। नाटक में मुख्यतः फैक्ट्री के अधिकारीगण ही अभिनय करते थे, परंतु दौराला मिल पत्रिका के संपादक और ओज के प्रख्यात कवि श्री राम प्रकाश 'राकेश' जी ने मेरा अभिनय स्कूल के एक नाटक में देख रखा था और तब उन्होंने मुझे शाबाशी भी दी थी। तो हुआ यूँ कि नाटक में जो सज्जन नारद का रोल करने वाले थे वह तीन-चार दिन पहले गंभीर रूप से बीमार हो गए। इस बीच फैक्ट्री में जाते हुए मुझे राकेश जी ने देखा और आवाज़ देकर बुलाया तथा मुझे नारद का रोल करने के लिए कहा, जिसे मैंने सहज ही स्वीकार कर लिया। नारद का लंबा रोल था जिसमें दो गीत भी थे। होता यह था कि मंचन से पहले दिन अधिकारियों और पात्रों के परिजनों के लिए नाटक की फाइनल रिहर्सल होती थी। मेरे आग्रह पर पिताजी भी गए तो उन्होंने देखा कि जो उनके वरिष्ठ अधिकारी थे, वे मेरी अभिनय क्षमता के कारण हाथ मिला रहे थे। घर लौटकर पिताजी ने कहा कि मेरा सीना गर्व से फूल गया जब मैंने विजेन्द्र से उन अधिकारियों को हाथ मिलाते देखा जिन्हें मैं रोज नमस्ते करता हूँ। अर्णव जी! उस दिन के बाद कलाओं के प्रति पिताजी का नजरिया बदल

गया और आपको आश्चर्य होगा कि बाद में उन्होंने भी कई गीत लिखे।

अर्णव– जब आप उलझन में होते हैं, तो निर्णय कैसे करते हैं?

डॉ. विजेन्द्र पाल शर्मा– उलझन में रहते हुए कोई भी व्यक्ति आसानी से निर्णय पर नहीं पहुँच पाता। ऐसे समय में मैं सबसे पहले अपने ईष्ट देव के पावन संरक्षण में अपने परिजनों और मित्रों से विचार-विमर्श करता हूँ। मैं सौभाग्यशाली हूँ कि मुझे हृदय से चाहने वाले सुमित्रों का साथ सुलभ है।

अर्णव– आज आपने सफलता के लगभग सभी मुकाम हासिल कर लिए हैं। इस सफलता का श्रेय आप किसे देना चाहेंगे?

डॉ. विजेन्द्र पाल शर्मा– अगर मैं यह कहूँ कि मैंने सफलता के सभी मुकाम हासिल कर लिए हैं, तो यह दंभ के अतिरिक्त कुछ न होगा, मैं तो कुछ भी नहीं हूँ, पर हाँ! जीवन के कुछ क्षेत्रों में कुछ-कुछ सफलता अवश्य मिली। साहित्य के क्षेत्र में मैंने जो कुछ भी लिखा है वह उल्लेखनीय तो नहीं है, परंतु भावपूर्ण गीतों, कहानियों की आत्मिक प्रस्तुतियों पर श्रोताओं को वाह-वाह करते अथवा उनकी आँखें नम होती देख, माता शारदे को प्रणाम करने लगता हूँ। चौधरी चरण सिंह विश्वविद्यालय, मेरठ से संबद्ध लगभग ६०० महाविद्यालयों की समन्वय समिति का १४ वर्ष संयोजक रहते हुए चतुर्थ श्रेणी कर्मचारियों से लेकर प्राचार्यों तक के लिए जो उपलब्धियाँ अर्जित कीं, उनसे इस जन्म को धन्य समझता हूँ। सहारनपुर की प्रख्यात संस्था विभावरी के संस्थापक सदस्य और वर्तमान में सचिव के रूप में विगत ३५-४० वर्षों से भिन्न भिन्न सामाजिक, साहित्यिक तथा सांस्कृतिक सेवाओं से संतुष्ट नज़र आता हूँ। व्यक्तिगत रूप से भी मुझे जब कभी अवसर प्राप्त होता है, उसके अनुरूप सेवा कार्यों में संलग्न रहता हूँ। इसका श्रेय प्रातःस्मरणीय पूज्य पिता जी को जाता है, जो बचपन में हमें कहा करते थे कि अगर किसी की सहायता मन से और तन से करनी पड़े तो विलंब न करना और सीमा में रहकर धन से होती हो, तो बिल्कुल भी पीछे मत हटना।

अर्णव– किस कार्य को करने में आप को सबसे अधिक कठिनाई आयी?

डॉ. विजेन्द्र पाल शर्मा– मेरी ससुराल में न तो ज़मीन जायदाद थी, ससुर जी का देहांत हो चुका था, वृद्ध बाबा जी थे जो अपना स्कूल चलाते थे। कोई साला भी न था। सासू माँ थीं और ये दो बहनें। मैंने इन सभी अभावों के कारण ही वहाँ शादी के लिए हाँ की थी। अब छोटी के विवाह का दायित्व मेरे कंधों पर था जिसके लिए मैं १०० से भी अधिक परिवारों में वर की तलाश में गया, जी हाँ, १०० से भी अधिक, पर किसी को दहेज़ चाहिए था, किसी को ज़मीन-जायदाद, किसी को रिश्तेदारी जीवित रखने के लिए भाई और पिता, तो किसी-किसी को ये सभी। अर्वण जी! जिस युग में महान आदमी शिक्षित होने का दावा करता हो, ग्रह-नक्षत्रों पर विजय का ढिंढोरा पीटता हो, उस तथाकथित प्रकाशमान समय में किसी व्यक्ति के सामने इससे बड़ी कठिनाई और क्या हो सकती है।

अर्णव– आपका वह कौन-सा अनुभव है, जिसने आपके जीवन को नया रूप प्रदान किया?

डॉ. विजेन्द्र पाल शर्मा– १९७१ में जब मेरी शादी हुई, उस समय मैं इंटरमीडिएट करने के बाद दौराला शुगर वर्क्स में कर्मचारी था। द्वार पूजन के लिए चलने से पहले बारातियों ने सूट-बूट-टाई डॉट ली थी, कि एक मित्र ने मुझे बिना टाई के देख, मेरे मना करने पर भी ज़बरदस्ती अपनी टाई मेरे गले में डाली ही थी कि पास ही हुक्का गुड़गुड़ा रहे मेरे ताऊ जी ने व्यंग्य कसा, 'हुँ! यह बड़ा ग्रेजुएट है, जो टाई बाँध रहे हो।' मैंने उसी समय गले से टाई निकाल दी और मन ही मन प्रतिज्ञा की कि अब ग्रेजुएट होने के बाद ही टाई पहनूंगा। सच मानिए, ताऊ जी के व्यंग्य ने मेरे लिए अमृत का काम किया और मैंने नौकरी में रहते हुए ही व्यक्तिगत रूप से बी.ए., एम.ए, तत्पश्चात पीएच. डी. की उपाधि और पत्रकारिता का स्नातकोत्तर डिप्लोमा तो हासिल किया ही, प्रयोगशाला सहायक की नौकरी और फिर महाविद्यालय में हिंदी शिक्षक होने का गौरव भी प्राप्त किया।

अर्णव– आप सृजन का चरम उद्देश्य क्या मानते हैं?

डॉ. विजेन्द्र पाल शर्मा– मेरे विचार से साहित्य सर्जना का उद्देश्य शालीन यथार्थ के माध्यम से पाठक के चित्त का परिष्कार करना है।

अर्णव– कहा जाता है कि साहित्यकार समाज का निर्माता होता है, किंतु आजकल सतही साहित्य रचा जा रहा है। इस विषय में आपके क्या विचार हैं?

डॉ. विजेन्द्र पाल शर्मा– साहित्य कभी सतही नहीं होता। सतही होते ही वह हितचिंतन का अपना नैसर्गिक स्वरूप खो देता है। आज के समाज की परिस्थितियाँ सतही मानसिकता से ग्रस्त हैं, जो रचनाकार, यहाँ मैं साहित्यकार शब्द का प्रयोग नहीं कर रहा हूँ, अयोग्यता के बावजूद, लालच के वशीभूत धनार्जन की अंधी दौड़ में शामिल हैं, वे ही इस तरह की बेहूदा रचनाओं का उद्योग चला रहे हैं। इसलिए मैं बेबाक़ी से कहूँगा कि कलम घिसने वाला हर व्यक्ति साहित्यकार नहीं होता और न ही राष्ट्र निर्माता।

अर्णव– आपकी दृष्टि में मंच की रचनाएँ और साहित्यिक रचनाओं में मूलभूत अंतर क्या है? श्रेष्ठ रचना का मानदंड किसे मानते हैं?

डॉ. विजेन्द्र पाल शर्मा– यह कहना कि मंच की रचनाएँ साहित्यिक नहीं होती, अन्याय पूर्ण होगा, क्योंकि मंच पर महादेवी वर्मा, बच्चन जी, गोपाल दास नीरज, रमानाथ अवस्थी, बालकवि बैरागी, काका हाथरसी, सोम ठाकुर, कुंवर बेचैन, राजेंद्र राजन जैसे उच्चकोटि के रचनाकारों ने यह सिद्ध किया है कि मंच पर साहित्यिक रचनाएँ पढ़ी जा सकती हैं । परंतु धीरे-धीरे अब मंच प्रायः चुटकुलों और फूहड़ हास्य का पटल बन गया है, कुछ ही कवि हैं जो मंच का ख़याल रखते हैं। यही कारण है कि अब सुधी श्रोताओं की रुचि मंचीय कवि सम्मेलनों में नहीं रह गई है। जहाँ तक प्रश्न है साहित्यिक और मंच की रचनाओं का तो इनमें सबसे बड़ा अंतर यह है कि साहित्यिक रचनाएँ पाठ्यक्रमों में पढ़ाई जाती हैं क्योंकि उनमें लक्षणा, व्यंजना, बिम्ब और प्रतीकों के साथ-साथ उदात्त उद्देश्य निहित रहता है जबकि मंच की अधिकांश रचनाएँ श्रोताओं के स्तर को देखकर अभिधा में लिखी जा रही हैं।

अर्णव– नई पीढ़ी को आप क्या संदेश देकर प्रेरित करना चाहेंगे?

डॉ. विजेन्द्र पाल शर्मा– अर्णव जी! नई पीढ़ी के लिए मेरा केवल एक ही संदेश है कि हम अपने जीवन, अपने लेखन, अपने व्यवहार में सहज, सरल और ईमानदार बनें, जैसा लिखें वैसा दिखें भी। अध्ययनशील बनें तथा अपने लक्ष्य के प्रति निरंतर प्रयासरत रहें।

– चरखी दादरी, हरियाणा
सचलभाष- ९८९६५१७१५९

●

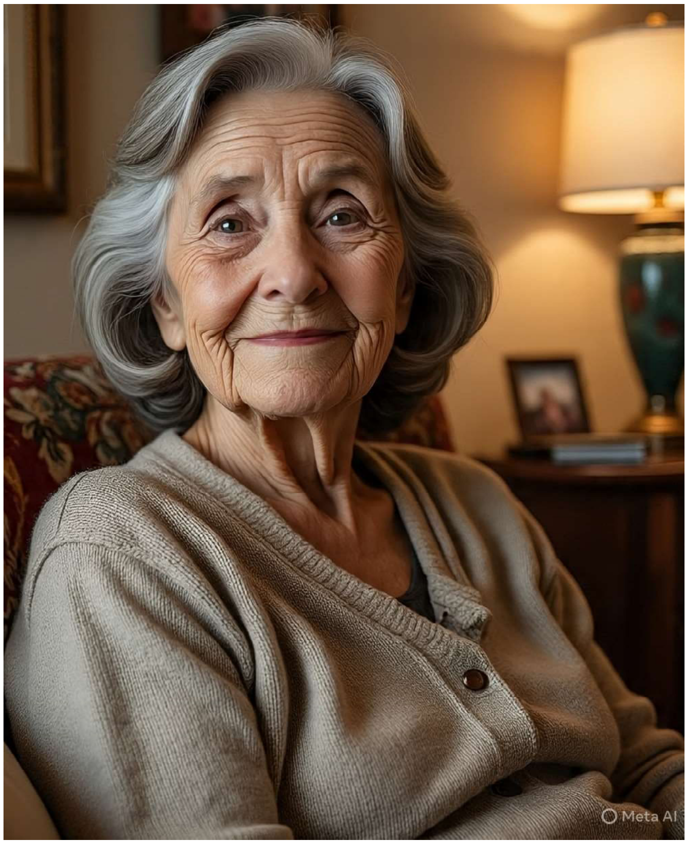

कहानी

दादी माँ

डॉ. विजेन्द्र पाल शर्मा

पड़ोस का वृद्ध पीरू तेली हँसकर कहता, 'क्यूँ लाला! तू बुढ़िया पर क्या जादू कर देता है जो यह मरते-मरते जी उठती है, इसे जाने दे, हमारी राह भी रोके खड़ी है, यह जाये, तो हम भी टिकिट कटवाएँ।' सुरेश उत्तर में कुछ न कह कर मात्र हँस देता।

उस परिवार में दादी अवस्था में सबसे बड़ी थीं, इसलिए कोई भी कार्य उनके आशीष के बिना अधूरा ही माना जाता था, इसी प्रयोजन से नई-नवेली दुल्हन को उनके चरण छूने के लिए उनके पास ले जाया गया था।

'हे भगवान् ! यह क्या है?' कहते हुए सुरेश की नई-नवेली भाभी दादी माँ के कमरे से बाहर भाग गई। सब ठगे-से खड़े दादी की तरफ़ अवाक् देखते रह गये। हक्की-बक्की सुरेश की अम्मा भाभी की तरफ़ लपकी। क्षणभर में दादी माँ के मुखमंडल पर विषाद की काली छाया तैर गई और टप-टप आँसू बूढ़े गालों पर लुढ़कते हुए दुःख लिखने लगे। उस क्षण किसी से कुछ भी तो कहते नहीं बन रहा था। सुरेश धीरे से उनकी चारपाई पर बैठा ही था कि दादी बिना कुछ बोले दूसरी तरफ़ मुँह करके लेट गयी। यद्यपि दादी अनुशासन की बहुत कठोर थीं, लेकिन हृदय गंगाजल के समान पावन और तरल। उन्हें बुढ़ापे में देख कर भी यह अनुमान सहज ही लगाया जा सकता था कि यौवन के दिनों में उनका शरीर कितना बलिष्ठ और कान्ति से परिपूर्ण रहा होगा, इसीलिए तो ७०-७५ वर्ष की उम्र में भी गर्मी की चिलचिलाती धूप में सुबह से शाम तक खेत में लाई कटते समय (गेहूँ की कटाई के समय) निरन्तर निगरानी करती रहती थीं। ईख छोलना, बाड़ी (कपास) चुनना, डंगरों (पशुओं) के लिए चारे का बोझ सिर पर रखकर लाना, उनकी दिनचर्या थी। सुरेश की अम्मा बताया करती थीं कि उसके बाबा शरीर से कमज़ोर थे, इसलिए वे कटाई, छिलाई या निराई तो कर पाते थे, पर भारी काम उनके वश का न था। सुरेश जब चार-पाँच साल का ही रहा होगा, तभी उसके बाबा जी का स्वर्गवास हो गया था।

वे आगे बताती थीं कि पहले तो दादी का रंग बहुत गुलाबी था, माथा चौड़ा, आँखें लम्बी, चाँदी जैसे केश उनके विलक्षण व्यक्तित्व का परिचय सहज ही दे देते थे। कली (छोटा हुक्का) पीते हुए वे किसी पटरानी से कम न लगती थीं। कमीज़ और हल्का लहंगा पहनती थीं, गले में हँसली, पैरों में चाँदी के कड़े और सिर पर सदैव ओन्ना (भारी ओढ़नी) रखतीं। लेकिन कुछ ही वर्षों में उनके शरीर पर फूल की बीमारी हो गई। दादी माँ का चाँद-सा मुख, न जाने कैसा-कैसा हो गया।

भाभी उसी दादी के चितकबरे चेहरे को देखकर तो डरी थी। पर क्या बाहरी सौंदर्य ही आदमी का असली स्वरूप है? भीतरी सौन्दर्य कुछ नहीं?

सुरेश की यादों के पंछी उस कच्चे घर के आँगन में उतर रहे हैं, जहाँ उसका बचपन बीता।

वह भूला नहीं है, तब वह कक्षा तीन का विद्यार्थी था। एक दिन दो सहपाठियों के बहकावे में आकर स्कूल नहीं गया और पूरा दिन रजवाहे में नहाते, मक्का के खेत में फूट-कचरे खाते, काई-पत्ता खेलते-खेलते बिता दिया। पड़ोस के एक बच्चे ने यह ख़बर किसी तरह उसकी दादी तक पहुँचा दी। बस फिर क्या था जब वह घर पहुँचा तो दादी कुछ नहीं बोलीं, उसके हाथ और पैर सन की रस्सी से पलहंडी (लकड़ी का स्टैंड, जिस पर कच्चे घड़ों में पानी भर कर रखा जाता है) से बाँध दिये और बैंत उठा कर ख़ूब धुनाई की। उस दिन दादी सुरेश को बहुत बुरी लगीं। मन ही मन उसने उन्हें वह सब कुछ कह डाला, जो वैसी स्थिति में कोई भी कहेगा। फिर तो वह दो दिन तक दादी से नहीं बोला, बोला ही नहीं, भैंस को दुहते समय अपनी छोटी-सी गिलसिया में कच्चा दूध लेने भी उनके पास न गया। पर दादी भी कुछ कम न थीं, एक बार भी अपनी हार स्वीकार नहीं की, सुरेश की तरफ़ तो बिल्कुल देखा तक नहीं। उसकी अम्मा ने पुचकारते हुए समझाया कि दादी तेरी दुश्मन नहीं हैं, वे चाहती हैं कि तू स्कूल से जी न चुराए,

पढ़-लिख कर अच्छा आदमी बने। अम्मा की बात उसकी समझ में आ गई और उसने उसी क्षण दौड़कर अपनी दादी के पैर पकड़ लिये। दादी ने भी देर न की और भोले सुरेश को तुरन्त छाती से लगा लिया। उस पल उसे अद्‌भुत सुख की अनुभूति हुई। उसने देखा, दादी माँ की आँखें तरल हो उठीं थीं। उनके नेत्रों में हिमालय का गलना देखकर सुरेश का मन भी अपने किये पर ग्लानि से भर उठा, और उसने तत्क्षण प्रण किया कि अब कभी स्कूल से अनुपस्थित नहीं रहेगा, फिर तो वह स्कूल से कभी भी गैरहाज़िर नहीं रहा।

एक दिन की बात है, उसकी छोटी बुआ गले में बिना ओढ़नी डाले, पड़ोस के घर में रह रही बुढ़िया को सब्जी देने चली गयीं। निश्चय ही यह अनजाने में हुआ, पर जैसे ही बुआ लौटीं, दादी की आँखों में खून उतर आया, बेशरम, बेहया, डंकनी और न जाने क्या-क्या कहते-चिल्लाते दादी ने चिमटे से बुआ की वह ख़बर ली कि परिवार की कोई लड़की फिर कभी बिना ओढ़नी घर की देहरी नहीं लांघ सकी। दादी बुआ को पीटती जाती थीं और बाप-दादों की इज़्ज़त की दुहाई देती जाती थीं। दादी उनमें से नहीं थीं जो अपनी अर्धनग्न बहू-बेटियों को देखकर फूले नहीं समाते। उन्हें तो अपना पिछड़ापन ही प्यारा था। अनायास ही सुरेश को दादी माँ की बहुत-सी बातें याद आने लगीं। वह जब बड़ा हुआ तो उसे कुछ ऐसी आदत पड़ी कि जब भी चारपाई या कुर्सी पर बैठता, तो उसका एक पैर स्वयं हिलने लगता, जैसा कि प्रायः बहुतों का पैर हिलता है। यह देखकर उसकी दादी बहुत गुस्सा करतीं, और कहतीं कि पैर हिलाने वाला निरा कम्बख्त होता है। एक दिन सुरेश ने कहा कि उसके पैर हिलाने का मतलब वह नहीं है जो वे समझती हैं। इस पर क्रोध से दादी का चेहरा तमतमा उठा। विरोध? और उनका? परिवार में कल्पना से परे था। दादी ने उसका कान पकड़ लिया। उसे लगा, बस एक कान का बूचा ही रह जायेगा, उसने कान छुड़ाने का प्रयत्न करते हुए कहा, 'माँ। पैर हिलाने की बात सुनकर पंडित जी ने बताया है कि मुझे कुर्सी की नौकरी मिलेगी।' हालाँकि उसने कान छुड़ाने के लिए ही झूठ बोला था, पर दादी की पकड़ एकदम ढीली पड़ गई, एक पल उन्होंने उसकी तरफ़ असमंजस की मुद्रा में देखा, फिर बोलीं, 'हाय! यू मन्नै के करा, तन्नै पहलै क्यूँ नी बताया? देख बेटे, जो यू बात सही है, तो दोन्नों पाँ हिलाया करा।' यूँ तो यह बात कुछ भी नहीं, पर इस बात की कोई तौल भी नहीं। सीधी-सच्ची दादी माँ की सरलता के प्रति वह उस पल अपूर्व श्रद्धा से भर उठा।

सुरेश अतीत में झाँक रहा था। आह! स्मृति-दर्पण में यह कैसा अनोखा छवि-बिम्ब प्रकाशित हो रहा है, धुँधला-सा छवि-बिम्ब, पूर्ण जीवन्त, उसे लगा कि वह मनोहारी रूप उसकी अपनी साँसों से ही उग रहा है।

दादी माँ कई दिन तक गुमसुम सी रहीं, जब उन्हें पता चला कि सुरेश की नौकरी शहर में लग गई है। बड़ी मन्नतों, प्रार्थनाओं के उपरान्त चार बहनों के बाद उसका जन्म हुआ था, इसीलिए दादी हर कीमत पर उसे अपनी आँखों के सामने रखना चाहती थीं, लेकिन जो होना था, वही हुआ, उसे गाँव छोड़ना पड़ा। दादी उस क्षण ख़ूब फूट-फूट कर रोयीं जब शहर जाने के लिए सुरेश ने अपना सामान उठाया। शुरू-शुरू में सप्ताहवार, फिर पन्द्रहवें दिन, और समय के साथ-साथ उसके गाँव जाने की आवृत्ति का समय बढ़ता गया। दादी हमेशा गुस्सा करतीं, और कहतीं, 'गली की उड़ देखतो देखतो दिद्दे फूट जाँ, पर तझै के, तेरी उड़ तै कोई जीवै, या मरै।' उस पल दादी के कृत्रिम गुस्से की लड़ियों से स्नेह के अनगिनत मोती बिखर-बिखर जाते।

दादी माँ का स्नेह ही था कि सुरेश की अनुपस्थिति में उन्हें जो कुछ भी फल या मिठाई खाने के लिए मिलती, उसमें से कुछ भाग वे सुरेश के लिए ज़रूर उठा कर रखतीं और जब भी वह घर जाता, उसे दे देतीं। एक बार सुरेश को मियादी बुख़ार हो गया, वह दो महीने तक घर नहीं जा सका। घर गया तो दादी ने कटोरी में रखकर दो पेड़े उसकी तरफ़ बढ़ाये, दादी को अब कम दिखने लगा था। सुरेश ने देखा पेड़ों पर फफूंदी लग गई थी, वह दादी की तरफ़ कुछ क्षण एकटक देखता रहा, ममत्व की देवी को देख उसका गला भर आया, आँखें नम हो उठीं बोल गले में अटक गये, शब्द गूंगे हो गये। वह अपनी दादी माँ से लिपट गया, और दोनों दादी-पोते बच्चों की तरह बिलख उठे। इसके बाद तो उसने गाँव जाने में कभी देर नहीं की।

उसके मन-दर्पण में दादी का एक और मनोहारी चित्र... वह पहचान रहा है, हाँ! दादी ही तो हैं। दादी के आत्मविश्वास पर मानो दर्पण भी मुस्कुरा उठा। उस दिन शनिवार था, वह गाँव गया तो घर में प्रवेश करते ही सीधे दादी के कमरे में पहुँचा। दादी का मस्तक गर्व से ऊँचा हो गया, वे धीरे से मुस्काई और फिर चिल्लाकर बोली, 'ऐ हरामजादियो! आओ, देक्खो।'

क्या हुआ? हड़बड़ाई-सी अम्मा और सुरेश की पत्नी दौड़ी-दौड़ी वहाँ आयीं। दादी ने स्वाभिमानी स्वर में कहा, 'के समझो अपणे आपकू? लिकाड़ो (निकालो) दोन्नों पाँच-पाँच रुपे।' सुरेश की समझ में कुछ न आ रहा था। बाद में उसकी पत्नी ने बताया कि दादी, अम्मा और उसके बीच इस बात को लेकर शर्त लगी थी कि तुम सबसे पहले जिसके कमरे में जाओगे, उसकी ही जीत होगी, और शेष दोनों उसे पाँच-पाँच रुपये देंगी। उसे स्मरण है कि इस घटना को दादी माँ ने अपने शेष जीवन में न जाने कितनी बार लोगों को सुनाया। जब-जब वे यह बात कहतीं, उन्हें लगता मानो कितना अपार सुख-धन छिपा है पाँच-पाँच के उन दो नोटों में। वे हमेशा आँखों में चमक लिए, गर्वीले स्वर में कहतीं कि दुनिया का सबसे अच्छा बेटा है मेरा। पर सुरेश मन ही मन सोचता कि ऐसी ममतामयी दादी माँ किसी की भी न होगी इस दुनिया में।

दादी जीवन के नब्बे वर्ष पार कर चुकी थीं, कभी भी अचानक बीमार पड़ जातीं। डॉक्टर से पहले सुरेश को बुलाने के लिए आदमी भेजा जाता। डॉक्टर, वैद्य तो जो इलाज करते, करते ही, लेकिन उसके जाने भर से ही दादी माँ ठीक हो जातीं। पड़ोस का वृद्ध पीरू तेली हँसकर कहता, 'क्यूँ लाला! तू बुढ़िया पर क्या जादू कर देता है जो यह मरते-मरते जी उठती है, इसे जाने दे, हमारी राह भी रोके खड़ी है, यह जाये, तो हम भी टिकिट कटवाएँ।' सुरेश उत्तर में कुछ न कह कर मात्र हँस देता।

इस बार सुरेश के पिताजी जब शहर आये तो उसके मन में अनजाना भय फुंकार उठा दादी बहुत बीमार हैं। वह स्वर्ग की उस देवी को खोना नहीं चाहता था, अस्पताल गाँव से डेढ़-दो कोस दूर और सवारी का कोई साधन नहीं, मगर

उसकी पीठ, उसके कंधे, उसका हौसला और उसके प्यार की तड़प उस दूरी से हारने वाली न थी, वह उन्हें पीठ पर उठा कर अस्पताल ले गया। दादी ने रास्ते भर इतने आशीषों की वर्षा की, कि उसके मन-प्राण भीग-भीग गये।

दादी सुरेश का हाथ थामे चुपचाप लेटी थीं। सुरेश ने उनकी तड़प देखी। अब वे स्वयं भी ईश्वर की शरण में जाना चाहती थीं। उसने कहा, 'माँ! मेरे यहाँ रहते नहीं मरोगी! मैं आपका मरना देख ही नहीं सकूँगा। मैंने भगवान से प्रार्थना की है कि मेरे सामने मेरी माँ के प्राण मत लेना।' दादी हौले से मुस्कुराई, 'पिच्छा छुडाणा चाहवै के? देख लिए, तेरी गोद्दी मैंई सिर रखकै दम तोडूंगी।' ऐसा लगा, उससे भी शर्त लगा रही हैं दादी माँ।

उनके दुलार का कोई मूल्य नहीं था सुरेश के पास। उसकी आँखें डबडबा आयीं, वह कमरे से बाहर भाग आया और जितना रो सकता था, रोया। सच! पिछले जन्म में न जाने कितने पुण्य किये होंगे, जो उसे ऐसी ममतामयी दादी की गोद में खेलने का सौभाग्य मिला।

दादी माँ की हालत कुछ सुधरने लगी तो उन्हीं के कहने पर वह शहर लौट आया। दादी माँ के बिछुड़ने की कल्पना मात्र से ही उसका मन काँप उठता था। वह सोचता कि लोग शायद इसी को कयामत कहते हैं।

चार दिन बाद उसे पता चला कि दादी अब नहीं रहीं। किसी को सुरेश तक ख़बर भेजने का समय ही नहीं मिला, टेलीफोन भी गाँव में उन दिनों कहाँ थे। उस दिन उसके पिताजी भी घर पर न थे। वे दिन ढले बाहर से लौटे तो बुजुर्गों की सलाह पर सूर्यास्त से पूर्व ही दादी माँ का अन्तिम संस्कार कर दिया गया। दादी सुरेश से तो शर्त ज़रूर हार गईं, पर सुरेश जीतकर भी जीत न पाया।

उनके देहान्त के दो-तीन दिन बाद सुरेश उनके कमरे में था। बर्तन, मिट्टी के। उनके बीच घूम-घूम कर कुछ टटोल रहा था। क्या मालूम, दादी माँ के बर्तनों में उनकी किस खुराक का दाना उसके लिए शेष बच रहा हो। कुछ है तो? क्या हो सकता है? काग़ज़? दादी माँ की वसीयत के पुर्जे हैं क्या? नहीं, पाँच-पाँच के दो मुड़े-तुड़े नोट हैं। वह पहचानता है, ख़ूब पहचानता है, ये वही नोट थे, जो चार-पाँच वर्ष पहले उसकी श्रद्धा और प्रेम पर विश्वास करके दादी माँ ने जीते थे। उस दिन उसने जाना कि मात्र पाँच-पाँच के नोट किसी को कितना रुला सकते हैं। दादी माँ की विजय के प्रतीक उन नोटों पर टप-टप पड़ते उसके आँसुओं ने श्रद्धावनत् हो तर्पण कर दिया। वह होंठों ही होंठों में बुदबुदाया 'तुम केवल दस रुपये नहीं जीती थीं दादी माँ, तुमने एक अनोखा संसार भी जीत लिया था मेरी श्रद्धा का एकछत्र साम्राज्य। सचमुच तुम सिकन्दर थीं माँ, दिव्य विजय-यात्रा की सिकंदर।'

किसी ने सच ही कहा है कि सपने किसी के गुलाम नहीं होते, हाँ, यदि कहीं सपनों का बाज़ार होता, तो सुरेश अपना सर्वस्व देकर भी दादी माँ के स्नेह-पगे रंगीले सपने ख़रीद लाता। हमेशा-हमेशा अपने पास, अपनी स्मृतियों में संजोने के लिए, मगर वह क्या करे, सपने किसी के गुलाम नहीं होते।

●

उजाले की ओर

डॉ. नीलमणि तिवारी

जनसंपर्क अधिकारी- संजय गांधी स्नातकोत्तर आयुर्विज्ञान संस्थान, लखनऊ

सचलभाष- ९४१५७८०३९५

यह वर्ष १९९९ की बात है, जब मैं वाराणसी से चलकर सहारनपुर के दैनिक समाचार पत्र 'हमारा फ़ैसला' में उपसंपादक के रूप में कार्य करने पहुँचा। वहीं मेरी भेंट अत्यंत ऊर्जावान और साहित्य-साधक डॉ. विजेन्द्र पाल शर्मा जी से हुई, जो वहाँ प्रूफ रीडिंग विभाग के प्रभारी तो थे ही, दूसरे विभागों की भी अच्छी जानकारी रखते थे। एक बार एक समाचार का शीर्षक लगाया गया 'दिनदहाड़े युवक की हत्या'। समाचार यह था कि एक युवक भैया दूज पर अपनी बहन के यहाँ टीका कराने जा रहा था जिसकी रास्ते में हत्या कर दी गई। जब वह प्रूफ डॉक्टर शर्मा जी के सम्मुख पहुँचा तो उन्होंने सम्बंधित व्यक्ति को बुलाया और अपना पक्ष रखते हुए कहा कि यदि इसका शीर्षक यह हो 'अब कौन आएगा अगली भैया दूज पर?' तो कैसा रहेगा? समाचार पत्र कार्यालय में सब लोग आश्चर्यचकित थे कि किसी समाचार का इतना मार्मिक शीर्षक भी हो सकता है।

गुरु जी अख़बार के सभी कर्मियों से बहुत स्नेह करते थे। वहाँ हम कई लोग बिहार और पूर्वी उत्तर प्रदेश से थे। किसी बड़े त्यौहार पर जब हम अपने घर नहीं जा पाते थे तब गुरु जी अपने आवास पर हम सब लोगों के लिए इस प्रकार से भोजन की व्यवस्था करते कि हमें कभी अपने घरों से दूरी नहीं खली। उस अपनत्व को मैं आज तक नहीं भूल पाया हूँ। मुझे याद है एक दिन जब मैं गुरुजी के यहाँ बैठा हुआ था, तब वेतन को लेकर मैं पत्रकारिता की अपनी डिग्रियों पर झल्ला उठा था और कोई दिशा न मिल पाने की स्थिति में हताशा और तनाव में था। मैंने अपने मन की बात गुरु जी के सामने रखी और कहा कि मैं डिग्रियों को फाड़कर फेंकना चाहता हूँ, तब उन्होंने मुझे समझाया कि प्रत्येक व्यक्ति के जीवन में अच्छे अवसर अवश्य आते हैं। जो निराश हो जाता है वह कुछ नहीं कर पाता और जो अवसर की तलाश में आगे बढ़ता है उसे मंजिल ज़रूर मिलती है। मुझे कितना मानसिक सम्बल मिला, शब्दों से परे है।

मैं आज लखनऊ के संजय गांधी स्नातकोत्तर आयुर्विज्ञान संस्थान, लखनऊ में जन सम्पर्क अधिकारी के पद पर सम्मानजनक जीवन व्यतीत कर रहा हूँ।

मैं गुरु जी का आजन्म आभारी रहूँगा जो मुझे अंधेरे से निकाल कर उजाले में लाए।

कहानी

अपराध की परिभाषा

डॉ. विजेन्द्र पाल शर्मा

तीर निशाने पर फिट बैठा और जैसे ही लिम्का वाले ने मुझे रुपये पकड़ाए, कमीने कानूनगो ने तहसीलदार के साथ आकर मुझे रंगे हाथों पकड़ लिया। 'मैं तो हक्का-बक्का रह गया। ज़िन्दगी में बेईमानी का कलंक लगना था माथे पर, सो लग गया, वह भी उसके, जिसने सदैव जीवन-मूल्यों के ऊँचे मापदण्ड स्थापित करने के लिए सदाचारी जीवन जिया। सच मानो, उस एक पल में ही मैं लोगों की घृणा और उपेक्षा का पात्र बन गया, उनकी, जो जीवन भर मुझे अपना आदर्श मानते रहे, मैं तो जैसे जीते-जी ही मर गया।'

उमाकान्त नये पड़ोसी के गृह-प्रवेश समारोह से लौटे तो विस्मय और अविश्वास से भरे हुए थे। ऐसा नहीं, कि उन्होंने ऐसा विस्मयकारी मकान पहली बार देखा हो, या ऐसा लाजवाब भोजन पहली बार किया हो, पर एक सिपाही, जो छोटा-सा वेतन पाता है, करोड़ों रुपये ख़र्च करके मकान बनाए, आश्चर्य की बात थी। वे सोच रहे थे कि एक हमारा ज़माना था, जब रिश्वत लेना जुर्म तो था ही, पाप भी समझा जाता था, यहाँ तक कि लोग अपनी बेटियों की शादी के लिए रिश्वतख़ोर विभागों में कार्यरत युवकों को उपयुक्त न समझते थे। उनका मानना था कि चोरी की रोटी खाकर उनके बच्चे भी चोर ही बनेंगे, लेकिन आज ज़रूरतमंदों का खून चूसना अधिकार समझा जाने लगा है। अब तो बाप अपनी बेटी के लिए धनवान दामाद चुनने में पूरी शक्ति लगा देता है, भले ही उसका धन लूट-खसोट और बेईमानी के रास्ते से ही क्यों न इकठ्ठा किया गया हो।

उमाकान्त ढलती उम्र के हैं, जिन्होंने कचहरी की पेशकारी रिटायरमेंट तक बड़ी शान और इज़्ज़त के साथ की। ज़रूरतें कभी बढ़ाई नहीं, मोटा खाया, मोटा ही पहना। लोगों के काम उत्साह से सँवारे, लेकिन आजकल तो लोग दौलत के बदले अपनी इज़्ज़त-आबरू खुलेआम नीलाम करते मिल जाते हैं।

उन्हें अपने मित्र जुगल भाई की याद अनायास ही आ गयी, जिन्होंने जीवन भर किसी से रिश्वत लेना तो दूर, काम करने के बदले किसी से एक कप चाय तक नहीं पी। फिर भी ऐसा सच्चरित्र और स्वाभिमानी व्यक्ति ग्लानि और विक्षोभ से त्रस्त, छह माह पूर्व, मृत्यु के गाल में समा गया। वह याद करता है जब एक दिन-

'अजी लानत भेजो मुझ पर और मेरी नौकरी पर, कुत्ता भी अच्छी तरह जीता है, वाह भाई वाह, यानि पटवारी न हुआ, गुलाम हो गया, जो अफ़सरों की तफरीह के साधन जुटाने के लिए मज़बूर हो। यह नौकरी करके तो वही बात हो गयी कि साँप के मुँह में छछुन्दर फँसी है, न निग़लते बनता है और न उग़लते।' जुगल भाई ने बड़ी उत्तेजना के साथ कहा। उनका चेहरा तमतमा रहा था, नथुने फूले हुए थे और हाथ काँप रहे थे।

'आख़िर बात क्या है? आज तो जनाब का पारा सातवें आसमान पर है। किसी काश्तकार से झगड़ा-वगड़ा हो गया क्या?' उमाकान्त ने उनकी झुंझलाहट का राज जानने के लिए पूछा।

'अजी गोली मारो काश्तकार को, वाह भाई वाह, कमिश्नर से लेकर मुख्यमंत्री तक कोई भी आये, सूली पर चढ़ाया जाता है बेचारा दो पैसे का पटवारी, जैसे वही कुबेर का रिश्तेदार है।'

'पहेली क्यों बुझा रहे हो, साफ-साफ बताओ ना माजरा क्या है?' उमाकान्त ने पूछा।

'क्या बताऊँ भाई! कल कानूनगो ने बुलाकर फ़रमान सुनाया कि कमिश्नर साहब शहर का मुआयना करने के लिए आ रहे हैं, इसलिए आव-भगत की ख़ातिर डाक बंगले पर पहुँच जाओ। सरकार का हुक्म सिर-माथे पर। डाक बंगले पहुँचा, तो कमिश्नर साहब की बीबी ने मुझे आवाज़ लगाई- 'अरे! इधर आना।'

अरे! सम्बोधन सुनकर तो मेरे दिल में आग लग गई। मैं उसके पिता की उम्र का हूँ, लेकिन पटवारी हूँ ना, इसलिए हाथ जोड़कर मैं उनके हुज़ूर में पेश हुआ, तो बोली, 'ठण्डे में क्या-क्या है?'

'सब कुछ है जी, कोका-कोला, गोल्ड स्पॉट, आइसक्रीम।'

'हमें लिम्का चाहिए।' गुलाबी रंग में रंगी मेम साहब ने आर्डर दिया।

'जी हुज़ूर, अभी हाज़िर किए देता हूँ।' कहकर मैंने अपनी बीस साल पुरानी साइकिल उठायी और शहर की तरफ़ दौड़ा। वक्त की मार देखो कि साइकिल पंचर हो गयी, पर भगवान की कृपा से साइकिल मिस्त्री जान-पहचान का था इसीलिए अपनी साइकिल उसके यहाँ पटकी और उसकी साइकिल लेकर सीधा दुकान पर पहुँचा। लिम्का की ठण्डी बोतलें ख़रीदीं। मैंने पाँच सौ का नोट दुकानदार को पकड़ाया मगर देर हो जाने की घबराहट में बाक़ी पैसे लेना भूल गया। मैं सोच रहा था कि मेरी इस फुर्ती से मेम साहब बहुत ख़ुश होंगी, इसीलिए फटाफट तीन-चार बोतलें खोलकर उनके पास पहुँचा 'लीजिए, बीबी जी।'

'क्या है? ओह, लिम्का? अभी नहीं, थोड़ी देर में लेंगे।' मेम ने बुरा-सा मुँह बनाते हुए कहा।

इस तरह वे बोतलें बेकार चली गयीं। जो चेहरा मुझे थोड़ी देर पहले गुलाबी दीख रहा था, अचानक काला-कलूटा, डायन जैसा लगने लगा। मैंने दिल ही दिल में उसे अनगिन गालियाँ दे डालीं, जो मेरी परेशानियों से बेख़बर अपने बच्चों के साथ ताश खेल रही थी।

'अरे सुनो!' गुलाबी मेम ने फिर पुकारा।

'जी, मेम साहब?' दिल की कड़ुआहट और नुकसान का ज़हर पीते हुए मैंने कहा।

'हमारा राजकुमार काजू की बरफी बहुत पसन्द करता है, मिलेगी?'

'जी हाँ, क्यों नहीं, अभी हाज़िर किए देता हूँ।' मैं फिर शहर की तरफ़ भागा तो रास्ते में याद आया कि मैं पहली दुकान पर बाक़ी रुपये भूल आया हूँ, इसीलिए पहले उसी दुकान पर पहुँचा।

'लाला जी! मैं अभी आपसे लिम्का ले गया था।'

'जी हाँ, मुझे याद है।' विनम्रता से लाला जी बोले। उनकी विनम्रता से मुझे कुछ आशा बँधी तो मैंने कहा, 'मैंने आपको एक पाँच सौ का नोट दिया था, लेकिन जल्दी में आपसे बाक़ी रुपये लेना भूल गया।'

'क्या? भूल गये? हमारे यहाँ ऐसा धोखा नहीं किया जाता जनाब, कहीं रास्ते में गिर-गिरा गये होंगे।'

'लेकिन ....' मेरा दिल डूबा जा रहा था।

'लेकिन-वेकिन कुछ नहीं, यहाँ रोज तुम्हारे जैसे न जाने कितने ठग आते हैं।' लाला तमतमाते हुए बोला।

'वाह भाई वाह, यानि आप मुझे ठग, यानि कि धोखेबाज़ साबित करना चाहते हैं?'

'नहीं हुज़ूर, आपको क्यों साबित करेंगे, धोखेबाज़ तो हम हैं, आपके माथे पर तो हरीशचन्दर महाराज छपा हुआ है। जाइये-जाइये, अपना रास्ता नापिए, मैं ख़ाली नहीं बैठा हूँ।' बहस का समय नहीं था, इसीलिए गुस्सा पीकर हलवाई की दुकान पर पहुँचा और बर्फी ख़रीदकर सीधा डाक बंगले पर। चमकती प्लेट में सजाकर मैंने बड़े अदब के साथ मेम साहब के सामने बर्फियाँ पेश कीं। वह गोद में बैठा पिल्ला मुझे थमाते हुए बोली, 'जाओ राजकुमार, बाबा बर्फी खिलाएंगे।'

'कुत्ता और राजकुमार?' मैं बुदबुदाया। हे परमात्मा! इस देश का क्या होगा, मेरी आँखों के सामने गाँव में रहने वाले कलुआ, भीमा, बुद्ध और न जाने कितने लोगों के सूखे होंठ और पीठ से चिपके हुए पेट तैर गए, जिन्हें दो जून की रोटी भी ढंग से नसीब नहीं होती। मुझे याद आया गिरधारी गरिया, जो छोटे-छोटे बच्चों को भूखों मरता देख पागल हो गया और बेबसी के आलम में पिछले सप्ताह चौपाल के कुएँ में कूदकर मर गया। पिल्ला (राजकुमार) मेरी बाहों में था और मेरा मन भूख से चीत्कार करती नंग-धड़ंगों की बस्ती के बीच खड़ा था। इसी बेख़याली में प्लेट हाथ से छूट गयी।

'इडिएट, गधा, पाजी। मिस्टर घोष! तुमने यह कैसा जाहिल आदमी यहाँ डिप्यूट किया है? मैं इसे टरमिनेट करके जाऊँगा।' निकट आते हुए अंग्रेजों के दत्तक पुत्र कमिश्नर ने आँखें निकालकर जिलाधीश को कुत्ते की तरह लताड़ा।

'सॉरी सर! न जाने आज इसे क्या हो गया है। यह तो बहुत ही शरीफ और मेहनती आदमी है, वैरी जैन्टल, फेथफुल एण्ड लैबोरियस सर। सभी की सेवा में हमेशा एक टांग पर खड़ा रहता है, प्लीज, इसे माफ कर दीजिए सर।'

'हालाँकि माफ़ी के क़ाबिल नहीं है, पर तुम कह रहे हो तो छोड़ रहा हूँ, वरना...' और फिर वे दोनों आगे बढ़कर अंग्रेजी में बतियाने लगे।

शाम को उनका डेरा उखड़ा तो मैंने बची हुई लिम्का की सभी बोतलें एक-एक करके फर्श पर फोड़ डाली और पीतम बाबू को जी खोलकर गालियाँ दीं, जिन्होंने मुझे यह शानदार नौकरी दिलवाकर न जाने किस जन्म का बैर निकाला था। वाह भाई वाह, कोई भी आए, इन्तज़ाम पटवारी जी ही करेंगे, जैसे पटवारी के घर में अलादीन का चिराग धरा है, जो रगड़ते ही मेम साहब के लिए लिम्का और महामहिम राजकुमार के लिए बर्फी तैयार कर देगा। अब तुम्हीं बताओ उमा भाई! आख़िर पटवारी के पास कौन-सी सोने की सिल्ली रखी है, जो दुनिया की खातिरदारी करता फिरे?'

सीधे-सादे जुगल भाई का तमतमाया हुआ चेहरा देखकर एक ओर जहाँ उमाकान्त के मन में गुदगुदी हो रही थी, वहीं उनके आक्रोश का कारण जानकर उनके मन को पीड़ा भी पहुँची। वे दोनों चुपचाप चलते रहे और चौराहे से अपनी-अपनी राह हो लिए।

चार-पाँच महीने बाद जुगल भाई कचहरी में मिल गए। राम-रहीम के बाद उमाकान्त ने पूछा, 'क्यों जुगल भाई, कैसे हो?' जुगल भाई का चेहरा फीका पड़ गया। आँखों से टप-टप दो आँसू झुर्रीदार पोपले गालों पर फिसल गए। चश्मा उतार कर आँखें पोंछते हुए बोले, 'बुढ़ापा आ गया भाई जी, लेकिन अच्छे-बुरे को पहचानने की तमीज नहीं आयी। रिटायर होने में कुल चार महीने बाक़ी हैं, और मैं रिश्वत लेने के आरोप में नौकरी से हाथ धो बैठा?'

'रिश्वत? और तुम?' उमाकान्त ने आश्चर्य से

पूछा। 'हाँ भाई जी, न्यायाधीश महोदय ने अपनी बुद्धि और विवेक की तराजू पर मुझे रिश्वतख़ोर घोषित करके अपराधी साबित कर दिया। मुझे नौकरी से तो निकाला ही, पाँच हज़ार रुपये का दंड भी अलग से सुनाया, जिसे अदा न करने पर दो महीने की सजा भी काटनी होगी।'

'अरे....?' उमाकान्त को जैसे करंट ने छू लिया हो।

'हाँ जी हाँ।' दुख भरी साँस छोड़ते हुए पटवारी जी ने कहा। फिर रुककर बोले, 'मैंने बड़ी भूल की भाई जी, जो सच्ची बात कही। वाह भाई वाह, कलयुग में सच्ची बात? कैसा पागल हूँ मैं।' जुगल की आँखें तरल हो उठीं।

'लेकिन कुछ कारण तो ज़रूर रहा होगा?' उमाकान्त ने पूछा।

'तुम तो जानते ही हो उमा भाई! कि यहाँ से आठ मील दूर बिलासपुर में हर साल देवी का मेला लगता है। लोग दूर-दूर से पूजा-पाठ, मन्नत-मनौतियों के लिए आते हैं और अधिकारी पिकनिक मनाने। वह क्षेत्र मेरा है, इसलिए सभी अधिकारियों की आवभगत करने का जिम्मा भी मेरा ही होता है। मैं पिछले चार साल से, जबसे इस क्षेत्र में आया हूँ, लगातार बलि का बकरा बनता चला आ रहा हूँ। एक दिन ग़लती से अपने पोते की नैतिक शिक्षा की किताब में पढ़ लिया कि कारण चाहे जो भी हो, किसी से बिना औचित्य के कुछ भी वसूल करना अन्याय और अत्याचार है। न जाने कैसे यह बात बहुत गहरे तक मेरे मन में बैठ गई, और मैंने मन ही मन फ़ैसला किया कि अबसे मैं किसी अधिकारी-वधिकारी की आवभगत नहीं करूँगा। तुम्हें तो मालूम ही है कि इस तरह के खर्चों के लिए तरह-तरह के डर दिखाकर इलाके के लोगों से जबरन चन्दा वसूल करने की परम्परा है, जो मुझे हमेशा अन्याय ही लगी, इसीलिए इस बार कानूनगो के बुलाने पर मैंने इन्तज़ाम की ज़िम्मेदारी से साफ इन्कार कर दिया। कानूनगो की शिकायत पर तहसीलदार साहब के यहाँ पेशी हुई, जिसमें मेरी नौकरी के लिए कई ख़तरे सुनाए गए, लेकिन मेरे मन में जो ठनी, सो ठन गई, और मैंने ज़िम्मेदारी लेने से साफ इन्कार कर दिया। तहसीलदार को मुझसे ऐसी आशा न थी।

'तो तुम्हें इन्तज़ाम करने से इन्कार है?' कानूनगो साहब दहाड़े।

'नहीं हुज़ूर! इन्तज़ाम करने से मैं इन्कार नहीं करता, नौकर हूँ आपका, लेकिन मेरे बस की यह बात नहीं कि अफ़सरों, मन्त्रियों की एय्याशी के लिए भोले-भाले लोगों के गले काटूँ। बहुत हो चुका, अब यह मुझसे न होगा, हाँ, आप अगर ख़र्चा दें तो मुझे इन्तज़ाम करने में कोई एतराज़ नहीं।' तहसीलदार की प्रतिक्रिया की प्रतीक्षा किए बिना ही मैं चला आया। कानूनगो के समझाने पर मेले में इन्तज़ाम पर तो मैं रहा, लेकिन सामान के लिए पैसा उन्हीं से लिया। बस यही अपराध मेरे गले की फाँस बन गया। मेला उठ गया तो कानूनगो गिरगिट की तरह रंग बदलते हुए बोला, 'जुगल किशोर! तूने तो हमारी भी आँखें खोल दीं, भाई दाद देता हूँ तेरी हिम्मत की। ठीक भी तो है, आखिर हम अफ़सरान के लिए कब तक उल्टे-सीधे काम करते रहेंगे। तूने सबका रास्ता साफ कर दिया।' मुझे उसका हृदय परिवर्तन देखकर बड़ी ख़ुशी हुई।

कुछ दिन बाद अचानक लिम्का वाला दुकानदार मुझे पूछता-पाछता तहसील में आया। उसे देखते ही मेरे दिल में बकाया रुपयों की टीस ताजा हो गयी। उसने अपरिचय के भाव से मेरे निकट आते हुए सकुचाकर पूछा, 'क्या आप ही पटवारी जुगल किशोर जी हैं?'

'जी हाँ, कहिए।' मैंने बेरुख़ी से उत्तर दिया।

'दरअसल हुज़ूर! बात यह है कि लाल चौक के पास मेरी दस बीघा ज़मीन ख़ाली पड़ी है। बस्ती के बीच आ गई है, काश्त हो नहीं सकती, इसीलिए मैं उसके प्लाट काटकर बेचना चाहता हूँ। उसी के लिए मुझे ख़सरा की नकल चाहिए।'

'आप यहीं रुकिए। मेरा थैला कानूनगो साहब के पास रखा है, मैं अभी लेकर आया।' उसे वहीं पेड़ के नीचे खड़ा छोडकर मैं कानूनगो के दफ़्तर में पहुँचा तो वह मुझे देखते ही बोला, 'जुगल किशोर! तेरा हमारा बीस-पच्चीस बरस का साथ है। इसीलिए कह रहा हूँ। आज तहसीलदार साहब ने मुझे बुलाकर कहा है कि मेले के ख़र्च में मुझे पन्द्रह हज़ार और तुझे पाँच हज़ार रुपये की मदद करनी ही होगी, बाक़ी वे मिलाएंगे। बुरा मत मानना, अधिकारियों से बैर मोल लेना, अक्लमंदी नहीं है। मैंने सोचा, चलो पच्चीस-तीस हज़ार रुपये से तो पिण्ड छूटा। लेकिन अनायास ही पोते की किताब वाली इबारत फिर से मेरी आँखों के सामने नाच उठी, तो भी न जाने किस अनजाने भय ने मुझे घुटने टेकने पर विवश कर दिया। फिर यह कोई बड़ी रकम भी न थी। मैंने सोचा कि लोग अपंगों, भूखे-प्यासों के लिए दान भी तो करते ही हैं, ये अफ़सरान ही क्या उनसे कम हैं। इसीलिए अपनी जेब से पाँच हज़ार रुपये देने का फ़ैसला कर लिया। तभी मैंने लिम्का वाले द्वारा रुपये मार लेने की बात और उसके काम के बारे में बताया तो कानूनगो उछल पड़ा और चुटकी बजाते हुए बोला, 'अरे वाह रे मुकद्दर के सिकन्दर, तेरा काम तो ऐसे ही बन गया। हल्दी लगी न फिटकरी और रंग चोखा ही चोखा। पंछी फँसा हुआ है, उसी से कह कि या तो अपने काम के पाँच हज़ार रुपये दे, नहीं तो उस जगह सरकारी शौचालय बनवाया जायेगा।'

'नहीं-नहीं, पाँच हज़ार नहीं, उसने मेरे तीन सौ रुपये मार रखे हैं, इसलिए उतने ही मिल जायें तो काफी हैं, बकाया तो मैं अपनी जेब से मिला ही दूँगा।'

'देख ले! तू बढ़िया मौका खो रहा है, इस वक्त बकरा ख़ुद छुरे के नीचे गर्दन झुकाए खड़ा है, करदे हलाल।'

'नहीं-नहीं, यह ठीक न होगा।' कहकर मैं लाला के पास पहुँच गया।

तीर निशाने पर फिट बैठा और जैसे ही लिम्का वाले ने मुझे रुपये पकड़ाए, कमीने कानूनगो ने तहसीलदार के साथ आकर मुझे रंगे हाथों पकड़ लिया।

'मैं तो हक्का-बक्का रह गया। ज़िन्दगी में बेईमानी का कलंक लगना था माथे पर, सो लग गया, वह भी उसके, जिसने सदैव जीवन-मूल्यों के ऊँचे मापदण्ड स्थापित करने के लिए सदाचारी जीवन जिया। सच मानो, उस एक पल में ही मैं लोगों की घृणा और उपेक्षा का पात्र बन गया, उनकी, जो जीवन भर मुझे अपना आदर्श मानते रहे, मैं तो जैसे जीते-जी ही मर गया।'

जुगल भाई को अनमना देखकर उमाकान्त का दिल भर आया और वे भारी कदमों से घर की ओर चल पड़े। पूरे रास्ते वे यही सोचते रहे कि आखिर कानून की दृष्टि में अपराध की परिभाषा क्या है?

●

कहानी

ट्राइ-साइकिल

डॉ. विजेन्द्र पाल शर्मा

राजेश सोचता है कि उसकी पत्नी, उसके दो बच्चे, बस जी भर ही रहे हैं। वह कुछ भी तो नहीं दे पाया उन्हें। एम.काम. तक प्रत्येक परीक्षा में प्रथम श्रेणी पाने वाले होनहार राजेश को दिखावटी इन्टरव्यू के क्रूर थपेड़ों ने बार-बार किनारे पर फेंक दिया। वह सोचता है कि सरकार अपने ही परीक्षाफलों पर अविश्वास क्यों करती है? करती है तो परीक्षाओं की शुचिता के लिए क्यों कठोर कदम नहीं उठाती? क्या वह नहीं जानती कि नौकरी के लिए फार्म भरने से लेकर, प्रतियोगी परीक्षाओं में सफलता दिलाने और नियुक्ति पत्र उपलब्ध कराने वाले चतुर लोग कैसे-कैसे गुल खिला रहे हैं?

रात के लगभग आठ बज चुके थे। आफ़िस में कुछ ज़रूरी काम निपटाते-निपटाते ही राजेश को देर हो गई। घर लौटते समय अचानक उसकी निगाह साइकिल स्टोर पर सजी, रंग-बिरंगी तीन पहियों वाली साइकिलों पर अटक गई। पास ही खड़ा होकर वह उन ट्राइ-साइकिलों को निहारने लगा, कि छोटी-सी बिटिया अर्चना का मासूम चेहरा उसकी आँखों में बरबस ही उदास हो उठा। महीनों से वह एक तीन पहियों वाली बेबी साइकिल के लिए आग्रह कर रही है, मगर लाख यत्न करके भी वह ख़रीद नहीं पा रहा था। ललचाई आँखों से राजेश एकटक उन साइकिलों को देख ही रहा था कि तभी दफ़्तर के साथी, चटर्जी बाबू ने उसके कन्धे पर हाथ रखते हुए उसका ध्यान भंग कर दिया। उन्होंने मुँह लटकाए हुए बताया कि उनकी पत्नी को कैंसर हो गया है। राजेश आश्चर्य से मुँह बाये उन्हें देखता रह गया।

'मगर पहले तो आपने कभी ज़िक्र नहीं किया चटर्जी बाबू?' राजेश ने पूछा।

'मुझे पहले पता ही नहीं चला। कई महीने से हल्का-हल्का बुख़ार तो ज़रूर रहता था, पर उसके लिए वह पैरासीटामोल टैब्लेट ले लेती थी, बुख़ार उतर जाता, तो वह फिर घर के काम में लग जाती थी। कल अचानक डाक्टर ने कैंसर डिक्लेयर कर दिया।' हताश, निराश से चटर्जी बाबू ने कहा।

यह सुनकर राजेश को न जाने क्यों घबराहट-सी होने लगी, और उसने घर पर आए मेहमानों का झूठा बहाना बनाकर तुरन्त घर की राह ली। ऐसा नहीं कि वह संवेदनशून्य हो, कि वह चटर्जी बाबू के दुःख में हिस्सेदारी नहीं करना चाहता। पर वह क्या करे, वह तो स्वयं तंगहाल था। उस समय वह डर गया था कि कहीं चटर्जी बाबू उसके सामने रुपयों-पैसों की माँग न रख दें। चटर्जी बाबू के होंठों की थरथराहट से अभी भी उसके रोंगटे खड़े थे। उसे अपने आप पर तरस आ रहा था। यूँ तो रोज ही किसी न किसी बात पर तरस आता ही रहता है, पर आज जब चटर्जी बाबू से झूठ बोला और साइकिल की दुकान पर रंग-बिरंगी साइकिलें देखी तो राजेश का मन भारी हो आया, जीवन जैसे निरर्थक लगने लगा। दिल और जेब की दूरी ने उसे आहत कर डाला। वह बड़बड़ाता हुआ चल रहा था कि अजीब मूर्ख हैं चटर्जी बाबू, रोज अखबारों और टेलीविज़न पर सावधान किया जाता है कि दस-पन्द्रह दिन की खाँसी टी. बी. हो सकती है। लम्बा बुख़ार कैंसर की निशानी हो सकता है। पोलियो ड्रॉप न पिलाने से प्राणों से भी प्यारे बच्चे अपाहिज़ हो सकते हैं, फिर भी श्रीमान पैरासीटामोल खिलाते रहे, ...हुँ। इसी द्वन्द्व में फँसा वह अपने घर पहुँच गया।

भीतर घुसते ही उर्मिला ने प्रश्नों की बौछार कर डाली, 'कहाँ रुक गए थे? रात हो गई है, तबियत तो ठीक है ना?'

'हाँ भई, मैं बिलकुल ठीक हूँ।' राजेश ने संयत होते हुए कहा, 'दरअसल आज आफ़िस में बहुत ज़्यादा काम था, वह निपटाया तो रास्ते में चटर्जी बाबू ने रोक लिया, इसीलिए देर हो गई।'

उर्मिला ने अनसुना करते हुए कहा, 'शाम को दूध वाली आई थी, मैंने कह दिया कि दो-चार दिन में तनख़्वाह मिल जाएगी तभी हिसाब हो सकेगा,

तो मुँहजली बहस करने लगी, कि बिब्बी जी! मुनिसपल्टी के मेहतरों तक कू तो तीन दिन हो गए पगार मिलो, अर तम कहरी अक बाबूजी कू तनख़ा नी मिली।' उर्मिला दूध वाली की नकल करते हुए बोली, 'पर मैंने तो कह दिया कि इन्हें दस-पन्द्रह तारीख़ से पहले तनख़्वाह नहीं मिलती, मिलते ही दे देंगे, तेरे पैसे मार में थोड़े ही हैं, दूध पियेंगे तो पैसे क्यों नहीं देंगे भला, तब जाकर मरी चुप हुई।'

यूँ तो राजेश कपड़े बदल रहा था, पर मन को तनख़्वाह मिलने और मिलकर ख़त्म भी हो जाने की वास्तविकता मथे डाल रही थी। कितना हाथ सिकोड़कर काम करता है, लेकिन ख़र्च हैं कि सुरसा के मुँह की तरह बढ़ते ही जाते हैं। वह सोच रहा था कि एडवांस की अर्ज़ी पास हो जाए तो सबका हिसाब चुकता कर दे। तभी उर्मिला चाय ले आयी। कप थामते हुए राजेश ने पूछा, 'बच्चे कहाँ है?'

'यहीं कहीं खेल रहे होंगे पाठक जी के बच्चों के साथ।'

उसने चाय की घूँट भरी तो उर्मिला ने गहरी श्वाँस छोड़ते हुए एक लिफ़ाफ़ा उसकी तरफ़ बढ़ाया। देवकीनन्दन के विवाह का निमन्त्रण था। राजेश भूला नहीं है, जब तक देवकीनन्दन की शादी नहीं हुई थी, तब तक हर चिट्ठी में उसे यही लिखता था कि मियाँ, शादी-वादी जल्दी कराओ, तुम्हारी बारात में मस्ती के साथ डांस किया जाएगा। परन्तु आज, जब यह निमन्त्रण पत्र आवश्यक रूप से सपरिवार पधारने के अनुरोध के साथ प्राप्त हुआ है, तब वह अपने आप को कितना मज़बूर पा रहा है। जामनगर तक आने-जाने का एक व्यक्ति का किराया ही हज़ार-दो हज़ार रुपये से कम न होगा, फिर ख़र्च के लिए ऊपर से भी रुपये चाहिए, इसके अलावा ढंग के कपड़े भी तो नहीं हैं उसके पास। आज दफ़्तर में सिंह साहब उसे सर्दी से काँपता देखकर गहरी सहानुभूति से बोले थे, 'शर्मा जी! सर्दी बढ़ रही है, कपड़े-लत्तों का ख़याल रखा कीजिए, सर्दी लग गई तो लेने के देने पड़ जायेंगे, कोट-वोट कुछ तो पहना करो।'

'कोट?, कोट है ही कहाँ सिंह साहब।' राजेश ने धीरे से कहा।

'अरे वाह! यह भी कोई बात हुई, हम मर गये हैं क्या, बाज़ार चलो और मनपसन्द कपड़े पर अंगुली भर रख दो, बाक़ी हमारा जिम्मा।' राजेश उनके प्रति कृतज्ञता से भर उठा, लेकिन वही बात है कि कब्र का हाल मुर्दा ही जानता है। कहाँ से चुकाऊँगा उनके पैसे? सिंह साहब के चले जाने के बाद एक साथी ने इशारे से राजेश को अपने पास बुलाया और सेंध भरी दृष्टि डालते हुए बोला, 'बुद्धू ही रहोगे शर्मा जी, अरे जिसके पास इतनी बड़ी कम्पनी का एकाउण्ट विभाग हो, वह इतना लाचार रहे? इस ज़माने में हरिशचन्द्र बनने से कुछ न होगा, बड़े-बडे नेता, अफ़सर और बाबू दोनों हाथों से देश और जनता को लूट रहे हैं। अरे! तुमसे पहले जो बाबू इस सीट पर काम करता था, एकदम टिप-टाप रहता था, यहाँ तो जो कमाया सो कमाया, साहब के झूठे दस्तख़त करके एक अच्छा-सा फ़र्ज़ी एक्सपीरिएंस सर्टिफिकेट बनाकर आज सरकारी विभाग में अधिकारी बना हुआ है, लाखों में खेल रहा है।'

'तो क्या मैं भी आत्मा को मारकर वैसा ही बन जाऊँ? नहीं, मैं ऐसा नहीं करूँगा।' आत्मविश्वास से भरे राजेश ने कहा।

'पापा! पापा! मेरी साइकिल? अनु पीछे बैठेगा, देखना। मैं ख़ूब तेज चलाऊँगी, आपको और मम्मी को भी बैठाऊँगी।' अर्चना ने पीछे से गले में बाहें डाल दीं। अचानक विचारों की शृंखला टूट गयी और राजेश पुनः वर्तमान में लौट आया। 'हाँ-हाँ बेटे! कल तुम्हारी साइकिल ज़रूर लाएँगे।' उसने अर्चना का गाल थपथपाते हुए प्यार भरे लहजे में कहा।

'मैं भी चलूँगी पापा, गुलाबी रंग वाली साइकिल लाने।' अर्चना ने आग्रह भरे स्वर में कहा।

जब से पड़ोस में गुप्ताजी के बच्चों को ट्राइ-साइकिल चलाते देख आयी है, तभी से अर्चना ने रट लगा रखी है। वह सोचता है, लाए कहाँ से? तीन-चार हज़ार से कम में क्या आएगी। वह कई दिन से सोच रहा था, कि इस बार जैसे-तैसे उर्मिला के लिए एक साड़ी ख़रीदेगा। वह कहती नहीं तो क्या, पर उसकी घिसी हुई पुरानी धोती तो सब कुछ कह ही डालती है। सचमुच बहुत सहनशीला है उर्मिला, कोई झगड़ालू बीबी मिल गई होती तो? भगवान ही जाने क्या होता। तभी उर्मिला ने अर्चना को झिड़क दिया, 'क्या साइकिल-साइकिल लगा रखी है, गडूलने से नहीं खेला जाता? आयी नवाबजादी कहीं की।'

'अरे, रे, ऐसे क्यों डाँटती हो, अभाव की गाँठ अभी से बच्चों के मन में पड़ गई तो जीवन भर नहीं खुलेगी, कौन-सा ताजमहल माँग लिया बेचारी ने, बचपन में ही जितना चाहें खेल-खा लें, बड़े होकर तो जीवन संघर्षों में ही बिताना है। नेतागण कितनी भी दिलासा दें पर इस विवेकहीन तन्त्र में तो चोर-लुटेरे ही और अमीर होंगे, गरीबों के लिए तो दो वक्त की रोटी जुटाना भी सपने देखने जैसा है।' उसने बच्चों का पक्ष लेते हुए कहा।

तभी कुछ टूटने की आवाज़ सुनकर उर्मिला अन्दर की तरफ़ दौड़ी, 'हाय राम! शीशा तोड़ दिया?' वह चिल्लाई और तड़ातड़ कई झापड़ बेचारे अनु के गाल पर जड़ दिए।

'अरे! क्या करती हो उर्मिला! तुम पागल हो गई हो क्या, प्राण लोगी इसके?' राजेश ने दौड़कर अनुज को गोद में उठा लिया, 'कौन सी ज़िन्दगी लुट गई हमारी, टूट जाने दो टूट गया तो, और आ जाएगा।'

'हाँ, हाँ, सिर पर चढ़ाकर रखो, इतना लाड़ करोगे तो याद रखना सँभाले न सँभलेंगे, फिर मत कहना हाथ से निकल गये।'

'मैं जानता हूँ उर्मिला कि इसके लिए मैं ही दोषी हूँ, मेरे दुर्भाग्य और मज़बूरी ने तुम्हें ऐसा बना दिया है, लेकिन उर्मिला! इसने शीशा जान बूझकर थोड़े ही तोड़ा है, और फिर तुमसे भी तो न जाने कितने कप-प्लेट और गिलास टूटे हैं, क्या मैंने तुम्हें कभी....?' उर्मिला अवाक्-सी राजेश की तरफ़ मुँह बाए देखती रह गई। राजेश ने संयत होकर कुछ कहना ही चाहा था कि वह झट कमरे में दौड़ गयी। राजेश समझ गया कि वह रूठ गई है। उसका गुस्सा बेवजह नहीं है, वह जानती है, वह महसूस करती है उसकी विवशताओं को, इसीलिए तो एक-एक पैसा बड़े जतन से ख़र्च करती है।

राजेश उसे मनाने कमरे में गया तो देखा चारपाई पर औंधी पड़ी वह सुबक रही है। उसने स्नेह से उर्मिला का चेहरा अपने हाथों में थामकर ऊपर उठाया तो लगा जैसे तीस-पैंतीस वर्ष की अवस्था में ही वह बूढ़ी हो चली है, वही, जिसकी देह सोना-सी दमकती थी, और चेहरा हूबहू चाँद की तरह। स्नेहिल अँगुलियों से उसके कपोलों पर बह गए आँसुओं को पोंछा तो चेहरे की सिलवटें

अँगुलियों को कचोट गईं। तभी उसे अपना ख़याल आया। वह याद करता है कि जब वह इण्टरमीडिएट में पढ़ता था, तब सीने का माँस हिलता चलता था, गाँव वाले जल-जलकर राख हुए जाते थे, और आज? आज तो जब सीने पर हाथ फिराता है तो पसलियाँ सूखी लकड़ी सी चुभती हैं।

अभी कुछ दिन पहले ही तो डॉक्टर ने उर्मिला के लिए दो-एक टॉनिक लिखे थे, ख़रीद लाया, तो बहुत नाराज़ हुई थी। 'दो-चार सौ रुपये से क्या कम आए होंगे, मुझे नहीं चाहिए टॉनिक-वानिक, इनसे भी कहीं सेहत बनती है भला, आपने गौतम से नहीं सुना कि दवाई कम्पनियाँ नौ रुपये की दवा पर बासठ रुपये छापती हैं, तो समझ लो कितनी सेहत सुधरेगी उनसे, फिर मैं कोई बीमार थोड़े ही हूँ, मुझे तो.....।' वाक्य बीच में छोड़कर कुछ रुककर वह पुनः बोली थी, 'इन बच्चों के लिए थोड़ी ऊन ही ला देते तो सर्दी से बचाव हो जाता।'

उर्मिला सच ही कहती है, सरकार और दवा कम्पनियाँ एक होकर देशवासियों के जीवन से खुलकर खिलवाड़ कर रही हैं। देश में यूँ तो विज्ञान के शिखर को चूमने के दावे किये जाते हैं लेकिन अफ़सर-मन्त्री क्यों नहीं देखते कि दवा बनाने में कितनी लागत आई, और वे कितने मूल्य पर बेची जा रही है। पर क्यों देखें? देखेंगे तो कंगाल न हो जायेंगे?

राजेश सोचता है कि उसकी पत्नी, उसके दो बच्चे, बस जी भर ही रहे हैं। वह कुछ भी तो नहीं दे पाया उन्हें। एम.काम. तक प्रत्येक परीक्षा में प्रथम श्रेणी पाने वाले होनहार राजेश को दिखावटी इन्टरव्यू के क्रूर थपेड़ों ने बार-बार किनारे पर फेंक दिया। वह सोचता है कि सरकार अपने ही परीक्षाफलों पर अविश्वास क्यों करती है? करती है तो परीक्षाओं की शुचिता के लिए क्यों कठोर कदम नहीं उठाती? क्या वह नहीं जानती कि नौकरी के लिए फार्म भरने से लेकर, प्रतियोगी परीक्षाओं में सफलता दिलाने और नियुक्ति पत्र उपलब्ध कराने वाले चतुर लोग कैसे-कैसे गुल खिला रहे हैं? वह ही जानता है कि कई साल चप्पलें घिसने के बाद बड़ी मुश्किल से उसे एक प्राइवेट फर्म में एकाउण्टेण्ट की नौकरी मिली। नौकरी क्या, बस नाम ही एकाउण्टेण्ट है, वरना वेतन तो कुल मिलाकर दस हज़ार रुपये ही मिलता है। इस महँगाई के ज़माने में इतने में वह क्या ओढ़े, क्या बिछाए? जब-जब गाँव में रह रहे बूढ़े पिता का खाँसी से लाल हुआ चेहरा याद आता है, ककड़ी की तरह सर्र-सर्र बढ़ती हुई बहन का विचार आता है, तब राजेश का हृदय चीत्कार कर उठता है। उसकी अम्मा भी इलाज के अभाव में ही तो पिछले वर्ष भगवान को प्यारी हो गयीं।

ऐसे में सहारा है तो केवल इस वास्तविकता का कि राम के इस देश में करोड़ों हैं जिन्हें ऐसी नौकरी भी मयस्सर नहीं। डिग्रियों की गठरी सिर पर उठाए न जाने उसके जैसे कितने होनहार गन्दी राजनीति के भँवर में फंसे हुए हैं।

'पापा! पापा! बाज़ार चलो ना, मेरी साइकिल।' बाल-सुलभ लहजे में अर्चना राजेश की पीठ से चिपकते हुए बोली। अनुज ने चारपाई पर चढ़कर राजेश का गाल चूम लिया, बोला, 'पापा! माम-माम।' और न जाने कैसे वह धड़ाम से सिर के बल फर्श पर जा गिरा। फर्श पर रखी कटोरी उसके सिर में चुभ गई, खून बह निकला, राजेश की आँखों के आगे तारे नाच उठे, डॉक्टर का चेहरा, तनख्वाह के दस हज़ार रुपये, मकान का किराया, दूध वाली का बिल, पिता जी का खाँसता निस्तेज चेहरा, देवकीनन्दन की बारात, उर्मिला की पुरानी धोती और गुड़िया-सी प्यारी बेटी अर्चना की ट्राइ-साइकिल, सब एक-एक करके पलक झपकते ही राजेश की आँखों में बबूल के काँटों की तरह उग आये, और राजेश? राजेश देश की अवसरवादी व्यवस्था की अव्यवस्थित योजनाओं के भँवर में फँसा हताशा के दरिया में डूबने लगा।

●

अपने लिए जिए तो क्या जिए

इस दुनिया में विरले ही हैं, जो दूसरों को शिखर पर देखकर खुश होते हैं। उन्हीं में एक नाम है डॉक्टर विजेन्द्र पाल शर्मा जी का। मैं दावे के साथ कह सकता हूँ कि यदि वे स्वयं अपने लेखन के प्रति सचेत रहते, तो कविता, गीत, कहानी, संस्मरण आदि विधाओं में उनके अनेक संग्रह प्रकाशित हो चुके होते। लेकिन जिसने भी उनसे मार्गदर्शन चाहा, उसी की रचनाओं का मनोयोग पूर्वक परिमार्जन किया। जिसने भी आग्रह किया, उसी के साहित्य की समीक्षा, पुस्तकों की भूमिका लिखने बैठ गए।

हम सभी जानते हैं कि नई रचना लिखने से कहीं अधिक कठिन कार्य है भूमिका अथवा समीक्षा लिख पाना, जिसके लिए एकाग्रभाव से पूरी पुस्तक को पढ़ना, नोटिंग करना, तत्पश्चात तटस्थ रहकर अपने विचार प्रकट करना होता है। डॉ. विजेन्द्र पाल शर्मा की विभिन्न विधाओं पर पकड़ बहुत मजबूत है। अनेक समर्थ रचनाकार भी अपनी पुस्तकों के प्रकाशन से पूर्व उन्हें अपनी पांडुलिपि दिखाकर आश्वस्त होते हैं। उनमें से मैं भी उनका एक कृपा पात्र हूँ। ईश्वर उनका साया हमारे ऊपर हमेशा बनाए रखें।

पवन कुमार शर्मा
- विकास नगर, देहरादून,
मोबाइल-९४१०१३२०६६

मनभावन छंद माहिया

डॉ. विजेन्द्र पाल शर्मा

हमारा देश विविधताओं का देश है जहाँ भिन्न-भिन्न बोलियाँ, वेशभूषा, खानपान, रीति -रिवाज, धार्मिक आस्थाएँ प्रचलित हैं। उसी प्रकार साहित्य की भी अन्यान्य विधाएँ निरंतर फलती-फूलती रहती हैं। चूँकि भारत की विशाल जनसंख्या गाँवों में निवास करती है, अतः उनकी लोक संस्कृति, रस्मो-रिवाज अपने पारंपरिक रूप में सदियों से चले आ रहे हैं और उन्हीं से जुड़ा है परम्परागत लोक साहित्य तथा लोक संगीत। आधुनिक संगीत भले ही पूरे तामझाम के साथ लोकप्रियता लूटने की जी तोड़ कोशिश कर रहा है, पर बाँसुरी, ढोलक, चंग, झांझ-मंजीरे, सारंगी, डुगडुगी, बीन, पखावज, जलतरंग, ढोल, सितार जैसी मिठास किसी और वाद्ययंत्र में कहाँ। वहीं, जीवन के अलग अलग संस्कारों, पर्व -त्योहारों पर गाए जाने वाली महाराष्ट्र की लावणी, राजस्थान की पंडवानी, असम का बिहू, उत्तर प्रदेश का चौता, कजरी, बारहमासा, मल्हार, विदेशिया, आल्हा आदि का कोई विकल्प नहीं है। माधुर्य की पराकाष्ठा, सामूहिक स्वर और प्राकृतिक चेतना का भव्य दर्शन, अभिनय, गायन और लोकसंगीत का मणिकांचन योग प्रत्येक मनुष्य के हृदय की मरुभूमि में कमल खिलाने की सामर्थ्य रखता है। अधिकांश लोकगीत महिलाओं के समूह द्वारा गाए जाते हैं जो गायन में विधिवत दीक्षित नहीं होतीं, फिर भी केवल संगीत के प्रति अपने अनुराग के कारण ही तन्मयता से गाया करती हैं। गीतों की यही प्राकृतिक अनुभूति कानों में मिश्री घोल देती है ।

मज़ेदार बात यह है कि अप्रत्याशित रूप से मधुर लोकगीतों के मूल रचनाकारों का कोई अता-पता नहीं होता। वे पीढ़ी दर पीढ़ी हस्तांतरित होते रहते हैं। हाँ! अब लोकविधाओं पर विचार पूर्वक लिखने का चलन प्रगति पर है तथा प्राचीन विधाओं को सायास संकलित भी किया जा रहा है। आजकल विश्वविद्यालय स्तर पर लोक साहित्य एक स्वतंत्र पाठ्यक्रम के रूप में पढ़ाया जा रहा है।

लोकगीतों की एक अत्यन्त प्यारी मनभावन प्रजाति है - माहिया, जो पंजाब प्रांत का अत्यंत मृदुल छंद है। इसे वहाँ शादी-ब्याह, लोहड़ी, बैसाखी जैसे अवसरों पर समवेत स्वर में गाया जाता है। परन्तु अब मन की विभिन्न अनुभूतियाँ, सामाजिक, राजनैतिक तथा धार्मिक मान्यताएँ आदि भी माहिया छंद में समाहित हो गए हैं। लोकगीतों की भाँति ही माहिया छंद लोक में कब प्रचलित हुआ इसका कोई ठोस प्रमाण तो नहीं है, लेकिन कहते हैं कि पंजाब के दो प्रेमियों माही और बालो इसी छंद के माध्यम से प्रेमालाप किया करते थे। उसी माही के नाम पर इसका नामकरण हुआ माहिया।

माहिया ३ पंक्तियों का छोटा सा छंद है जिसकी प्रथम और तृतीय पंक्ति में १२-१२ तथा दूसरी पंक्ति में १० मात्राएँ होती हैं। पहली और तीसरी पंक्ति के अंत में प्रास यानि तुक का होना तो अनिवार्य है ही, गुरु वर्ण का प्रयोग भी लयात्मक ता की दृष्टि से आवश्यक है।

माहिया की ख़ूबसूरती और अधिक बढ़ जाती है यदि तीनों पंक्तियों में द्विकल का प्रयोग किया जाए, जो इस प्रकार है-

पहली पंक्ति -२×२×२×२×२×२= १२ दूसरी पंक्ति - २×२×२×२×२ = १०
तीसरी पंक्ति - २×२×२×२×२×२ = १२

२   २ २   २   २ २
चल सूरज बन जाएँ
२   २ २   २   २
खुद जलकर जग का
२   २ २   २   २ २
अँधियारा पी जाएँ

इस संपूर्ण छंद में द्विकल का भलिभाँति निर्वाह हुआ है। साथ ही, पहली व तीसरी पंक्ति के अंत में गुरु वर्ण और तुक भी है।

प्रायः यह कहा जाता है कि माहिया लिखित रूप में सबसे पहले १९५८ में रिलीज हुई फिल्म 'फागुन' में आए, जिन्होंने दर्शकों के बीच विशेष लोकप्रियता अर्जित की परंतु वे माहिया मात्रा- विधान की दृष्टि से त्रुटिपूर्ण हैं। संभवतः इसका कारण उनके रचयिता कमर जलालाबादी का उर्दू दाँ होना है, जहाँ मात्राओं का उठना-गिरना दोष नहीं माना जाता। वे माहिया इस प्रकार हैं-

तुम रूठ के मत जाना-१३
मुझ से क्या शिकवा -१०
दीवाना है दीवाना -१४
क्यों हो गया बेगाना। -१३
तेरा मेरा क्या रिश्ता -१४
यह तूने नहीं जाना -१३

१९७८ में बर्मिंघम की एक स्टूडियो में चित्रा सिंह और जगजीत सिंह के गाए माहिया यूट्यूब पर उपलब्ध हैं जो गायकों की प्रसिद्धि के कारण तो पसन्द किए गए, पर गठन की दृष्टि से उन्हें माहिया नहीं कहा जा सकता, देखें-

कोठे ते आ माहिया -१३
मिलणा ता मिल आके -१२
नईं ता खसमाँ नूँ खा माहिया -१७
की लेणा ए मित्राँ तों। -१४
मिलणे ता आ जावाँ। -१२
डर लगदा ए छितणा तों। -१४

एन एल गोसाईं ने हिंदी में माहिया छंद का पहला संग्रह अमर साहनी का सन् २००८ में प्रकाशित 'बोल माहिया दिल की बोल' को माना है। उसके पश्चात २०१० में प्रोफेसर योगेश छिब्बर का 'जिकर पियारे का', २०१४ में प्रदीप गर्ग पराग का 'माही ओ माही', २०२१ में हरि राम 'पथिक' का 'दर्पण मौन रहा' प्रकाशित हुआ। इसी बीच सुषमा भंडारी का भी माहिया संग्रह आ चुका है। यूँ डॉ. लक्ष्मी शंकर बाजपेई, डॉ. विजेन्द्र पाल शर्मा, डॉ. अजय जनमेजय, डॉ. सुधा गुप्ता, डॉ. अशोक शर्मा, डॉ. दमयन्ती शर्मा, डॉ. भावना कुमारी, डॉ. आर पी सारस्वत, रामेश्वर कांबोज 'हिमांशु' तथा पवन शर्मा आदि निरंतर भावपूर्ण माहिया लिख रहे हैं । प्रदीप गर्ग पराग ने माहिया छंद में पहेलियाँ भी लिखी हैं । उसी प्रकार हरि राम 'पथिक' ने अपने माहिया संग्रह 'दर्पण मौन रहा' में कुल १३०४ माहिया सम्मिलित किए हैं जिनमें से ४५२ माहिया अंताक्षरी तथा ४०० पहेलियों के रूप में हैं।

मुझे विश्वास है कि जिस शीघ्रता से माहिया श्रोताओं/पाठकों के बीच लोकप्रियता प्राप्त कर रहा है, वह दिन दूर नहीं, जब अधिकांश हिन्दी कवि इसके लेखन में प्रवृत्त होंगे।

- ५/३१५१-न्यू गोपाल नगर, नुमाइश कैम्प, सहारनपुर-२४७००१
सचलभाष- ८६३०१७८७८३

डॉ. विजेन्द्र पाल शर्मा की कुछ काव्य रचनाएँ

सरस्वती वंदना

वरप्रदा हे शारदा वागीश्वरी
काव्य अमृत की बहा दो निर्झरी

नीर-क्षीर विवेक दो माँ, शब्द के मोती चुनूँ
कर सकें जग को प्रफुल्लित, गीत कुछ ऐसे बुनूँ
हो मृदुल मधुरिम सृजन मातेश्वरी
वरप्रदा हे शारदा वागीश्वरी

ज्ञानदा करना दया, चिंतन-मनन को पालना
हो सदा अभिव्यक्ति में, कल्याण की शुभकामना
कंठ की गगरी रहे रस से भरी
वरप्रदा हे शारदा वागीश्वरी

शब्द-शक्ति प्रबल रहे, बिंबों प्रतीकों से भरी
ख़ूब फूले औ' फले मम साधना की वल्लरी
जो कहूं उसमें भरो जादूगरी
वरप्रदा हे शारदा वागीश्वरी
काव्य अमृत की बहा दो निर्झरी

मुझे मत याद करना

मैं नहीं हूँ प्यार के क़ाबिल
मुझे मत याद करना

जन्मना- मरना सभी की
एक नियमित प्रक्रिया है
जिस प्रयोजन जन्म पाया
वह कहाँ पूरा किया है
हूँ अँधेरे में अगर मैं
बालकर दीपक न धरना
मैं नहीं हूँ प्यार के क़ाबिल
मुझे मत याद करना

पोथियाँ अनगिन पढ़ीं, पर,
प्रेम आखर पढ़ न पाया
अहित के डर से कभी
सच के शिखर पर चढ़ न पाया
सीख ही पाया नहीं मैं
भावना का सिंधु तरना
मैं नहीं हूँ प्यार के क़ाबिल
मुझे मत याद करना

आह ! लाखों की तरह
मैं भी धरा पर भार ही हूँ
स्वयं में सिमटे हुए का
उद्धरण साकार ही हूँ
प्यास जग की हर न पाया
जबकि था उद्दाम झरना
मैं नहीं हूँ प्यार के क़ाबिल
मुझे मत याद करना

खोल सकता था हृदय की
खिड़कियाँ, लेकिन न खोलीं
वृक्ष था, फल स्वयं खाए
की नियति से ही ठिठोली
था नहीं स्वीकार मुझको
दंभ के नभ से उतरना
मैं नहीं हूँ प्यार के क़ाबिल
मुझे मत याद करना

गीत

शब्द के बीज बोकर चलो
गीत की बाग़वानी करें

भावना की सघन छाँव में
तप्तमन को मिले सांत्वना
छंद के मन्दिरों में चले
शुभ अलंकार की साधना
हर तरफ़ मन-कमल खिल उठें
बात ऐसी सुहानी करें
शब्द के बीज बोकर चलो
गीत की बाग़वानी करें

झाँकते हों सुगढ़ बिंब की
ओट से मदभरे दो नयन
कान के तार दिल से जुडें
हो सरलतम विषय का चयन
मन-लुभावन मधुर कंठ के
पाँव में हम रवानी भरें
शब्द के बीज बोकर चलो
गीत की बाग़वानी करें

गीत युग- युग जिए इसलिए
दिव्यता का यशोगान हो
अर्थ की संपदा से भरा
काव्य का वृहद जलयान हो
विश्व को डोर में बाँधती
कुछ अनोखी कहानी झरें
शब्द के बीज बोकर चलो
गीत की बाग़वानी करें

एक दिन हम चले जाएंगे
गीत जीवित रहेंगे सदा
खुशबुओं में उन्हीं की रमें
मुस्कुराएंगे हम सर्वदा
गीत केवल भले दो लिखें
पर अलौकिक बयानी करें
शब्द के बीज बोकर चलो
गीत की बाग़वानी करें

गीत

कुछ छंद उन्हें अर्पित मेरे
जिनके पाँवों में छाले हैं
जो घोर विषमताओं में भी
मानवता के रखवाले हैं

है उन्हें समर्पित प्रथम छंद

जो सीमाओं पर सजग खड़े
सुनकर हुंकार सूख जाएँ
अरिसैन्य सिंधु भी बड़े-बड़े
निज शीश कटाकर जो-
माता का मान बढ़ाने वाले हैं
कुछ छंद उन्हें अर्पित मेरे
जिनके पाँवों में छाले हैं

यह दूजा छंद नमन का है
उन मज़दूरों के चरणों में
जो ताजमहल नित गढ़ते हैं
खुद ढल-ढलकर उपकरणों में
तपती दोपहरी में जलकर
जो छाँव बिछाने वाले हैं
कुछ छंद उन्हें अर्पित मेरे
जिनके पाँवों में छाले हैं

नंगे कृषकाय कृषक मेरे
तीसरे छंद के अधिकारी
लिख दिए भाग्य में विधिना ने
जिनके अभाव औ' लाचारी
जो सूर्य जगत के लिए, मगर-
जिनके अपने दिन काले हैं
कुछ छंद उन्हें अर्पित मेरे
जिनके पाँवों में छाले हैं

कुछ छंद और भी हैं ले ले
जो उतरे खरा कसौटी पर
बेईमानी की मुहर न लगने-
दी हो जिसने रोटी पर
ये छंद हमारी पावन सौगंधों-
ने मिलकर पाले हैं
कुछ छंद उन्हें अर्पित मेरे
जिनके पाँवों में छाले हैं

गीत

यह समय कितना कड़ा है
सामना जिससे पड़ा है

फूल-पत्ती, बेल-बूटे उत्सवों को हैं तरसते
प्रेम के, मनुहार के, मुस्कान के शृंगार झरते
है विवश वह दीप, जो तूफ़ान से हर पल लड़ा है
यह समय कितना कड़ा है

देखते हैं दूर से ही टकटकी परिजन लगाए
प्राणलेवा घुटन के विषधर हताशा ने जगाए
कुछ नहीं कर पा रहे, यह शूल सीने में गड़ा है
यह समय कितना कड़ा है

आज चाँदी काटते हैं विवशताओं के लुटेरे
छल-कपट, हैवानियत के बढ़ रहे दिन-दिन अँधेरे
और भोला आदमी मायूस भौचक्का खड़ा है
यह समय कितना कड़ा है

कुछ फरिश्ते ढाल बन लोहा समय से ले रहे हैं
मृत्यु को निज शक्ति-भर हर पल चुनौती दे रहे हैं
है नमन उनको कि जिनके हौसलों का क़द बड़ा है
यह समय कितना कड़ा है

कारगिल शौर्य दिवस पर विशेष

सावन नयनों में घिर आया
जाने कितनी-कितनी यादें
रिमझिम-रिमझिम में भर लाया

झूले पड़े नीम के आँगन
पेंग बढ़ाता था भोला मन
अल्हड़ बचपन को यौवन ने
चुपके से इक दिन भरमाया
सावन नयनों में घिर आया

मन-वसुधा पर पहले-पहले
जब बरसे घनश्याम रुपहले
तोड़ दिए बंधन सावन ने
मैं थी कुछ, कुछ और बनाया
सावन नयनों में घिर आया

इस सावन यूँ आए साजन
ढका तिरंगे से गोरा तन
गूँज उठा जयघोष गगन में
धरती ने जन-गण-मन गाया
सावन नयनों में घिर आया

वहीं कहूँगी, सुनती हूँ जो
मरे नहीं बलिदान हुए वो
फिर क्यों हरी चूड़ियाँ तोड़ी
क्यों मेरा सिंदूर छुड़ाया
सावन नयनों में घिर आया

मैं शहीद की गरिमा पावन
बिखर न जाना ओ भोले मन
तुझे जला डालूँगी सावन
पलकों से छनकर जो आया
सावन नयनों में घिर आया

('काग़ज़ का भी मन होता है' काव्य संग्रह से)

गीत

कर्म पथ बुहारते चलें
जन्म को सँवारते चलें

छूट जाए पथ में न कोई अकेला
सब मिलकर झेलेंगे हर इक झमेला
व्यथित को दुलारते चलें
जन्म को सँवारते चलें

क्यों है पड़ोसी के घर में अँधेरा
उत्सुकता का बंधु भाव हो घनेरा
चाँदनी उतारते चलें
जन्म को सँवारते चलें

पूजा-नमाज का न कोई सहारा
व्यर्थ सभी, मन न यदि पावन हमारा
मंत्र यह उचारते चलें
जन्म को सँवारते चलें

गीत

हाँ ! खुशी बाँटने का हुनर
सच कहूँ सीख लें हम अगर
मुक्त मन-प्राण हो जाएँगे
खिलखिलाने लगेंगे अधर

चाँदनी में नहाएँ सभी
चल चलें चाँद बनकर खिलें
बादलों की तरह रीतकर
तृप्ति के ताल में हम ढलें
आओ बन कर दिया यूँ जलें

राह रोशन रहे रात भर

बोल के फूल तो बाँटिए
खुशबुओं के चलें सिलसिले
रूठकर दूर जो हो गए
दौड़कर चल लगालें गले
कितने पल पास हैं दोस्तों
क्या ख़बर, क्या ख़बर, क्या ख़बर

गीत

मौन की तोड़ो भी दीवार
उठ रहा भावसिंधु में ज्वार

आ गए हैं हम इतने पास
कुलॉचें भरता है उल्लास
बहुत आतुर हैं मन के अश्व
नियंत्रण के सब विफल प्रयास
मानिनी कुछ तो बनो उदार
मौन की तोड़ो भी दीवार

तुम्हारे अधर खुलें तो मीत
हवा में तैर उठेंगे गीत
नयन भर देखो तो चितचोर
निभाओ चिर-बन्धन की रीत
न हठ का करो प्राण पर वार
मौन की तोड़ो भी दीवार

न बोलो तो जग लगे उदास
प्रणय की बढ़ती जाती प्यास
एक पल बीत रहा ज्यों वर्ष
मिलन की टूट न जाए आस
लाज का उचित नहीं व्यवहार
मौन की तोड़ो भी दीवार

हिले हैं होंठ हुआ आभास
खिलेगा तन-मन में मधुमास
सजेंगे भावों के प्रासाद
मिटेगा जन्मों का संत्रास
प्राण में बजने लगे सितार
मौन की तोड़ो भी दीवार

गीत

डूबती जा रही है, नदी नाव में
आज अनमोल ले लो, किसी भाव में

सच करे चाकरी, झूठ के गाँव में
बेड़ियाँ स्वर्ण की, न्याय के पाँव में
नेकियाँ अनमनीं, है बदी ताव में
डूबती जा रही है, नदी नाव में

हारते हैं न कहते, जिन्हें वंदिता
क्रूरता नित जलाती, उन्हीं की चिता
संगठित दुष्ट हैं, सुजन बिखराव में
डूबती जा रही है, नदी नाव में

रात दिन लाज के, आवरण हट रहे
घर नहीं, आज माता-पिता, बट रहे
कोई मरहम लगाता, नहीं घाव में
डूबती जा रही है, नदी नाव में

धर्म के नाम पर, रक्त का खेल है
फैलती जा रही, द्वेष की बेल है
स्वार्थ का विषय भरा, मीत सद्भाव में
डूबती जा रही है, नदी नाव में

आइए कुछ करें, ताकि बदलाव हो
विश्व में प्यार का, ख़ूब फैलाव हो
फँस न जाए हँसी, अश्रु के दाव में
डूबती जा रही है, नदी नाव में

पितृ-स्मृति

आज जब आँगन सुखों के मेघ छाए
हे पिता! हर पल मुझे तुम याद आए

हाथ में छाले-फफोले पाँव में
दिन अभावों के गुजारे गाँव में
तुम हमारे ही लिए ग़लते रहे
आग पर संघर्ष की चलते रहे
हम हँसें बस इसलिए आँसू छिपाए
हे पिता! हर पल मुझे तुम याद आए

मुँह चिढ़ाती थी निराशा हर घड़ी
लक्ष्मी हँसतीं रहीं नभ में खड़ी
ड्योढ़ियाँ चूमीं नहीं दरबार की
की नहीं चिंता समय के वार की
भूख में भी मंत्र मेहनत के सिखाए
हे पिता! हर पल मुझे तुम याद आए

गोद में मुझको खिलाने के लिए
मन्नतें माँगीं जलाए नित दिए
और काँधे पर बिठाकर घूमना
चाँद कह-कहकर हमेशा चूमना
आदमी के वेश में भगवान आए
हे पिता! हर पल मुझे तुम याद आए

आज छप्पन भोग हैं, पर तुम नहीं हो
सब सफल संयोग हैं, पर तुम नहीं हो
अब न जीवन में कहीं दुश्वारियाँ हैं
दूर इस दर से सभी लाचारियाँ हैं
फल रहे हैं वृक्ष जो तुमने लगाए
हे पिता! हर पल मुझे तुम याद आए

गीत

मन है बहुत अधीर, मेरा
किससे बाँटूँ मैं विदेश में
विकल हृदय की पीर
मेरा, मन है बहुत अधीर

कहा जगत ने उस पथ जाओ
झोली भर-भर सोना लाओ
सोना पाया, मगर लुट गई,
रिश्तों की जागीर
मेरा, मन है बहुत अधीर

नाच रहीं सारी सुविधाएँ
तृप्त हो रही हैं तृष्णाएँ
तन से तो राजा हूँ, लेकिन,
मन से निपट फ़कीर
मेरा, मन है बहुत अधीर

राखी बाँध न पाती बहना
भीगी पलकों से यह कहना
भैया बाबा-दादी तुम बिन,
रहते हैं गंभीर

मेरा, मन है बहुत अधीर

नहीं मुखाग्नि माँ को दे पाया
जिसने जन्म दिया, दुलराया
अंत समय ममता से दूरी
गई कलेजा चीर
मेरा, मन है बहुत अधीर

गीत

चलो यार इस ज़िंदगी के
सफर को सुहाना बनाएँ
ढलें गीत में इस तरह हम
युगों तक अधर गुनगुनाएँ

कभी आपको मैं बुलाऊँ,
कभी आप मुझको बुलाएँ
भले दो घड़ी पास बैठें
मगर हो मगन खिलखिलाएँ
जहाँ हो दिलों में न दूरी
नया पंथ ऐसा चलाएँ

बताओ बनें शूल क्यों हम
जरा-सी मिली ज़िंदगानी
हरी मख़मली दूब बनकर
रचें दिव्यता की कहानी
जहाँ प्रेम की आरती हो
उन्हीं वादियों में समाएँ

न आँसू किसी आँख में हो
तभी चैन मन को मिलेगा
सभी के लिए ख़ैर मांगें
तभी विश्व-उपवन खिलेगा
न मंचीय भाषण करें हम
मृदुल भाव जीकर दिखाएँ

गीत

न हों उलझने, ज़िंदगी मुस्कुराए
समय देवता हर बला से बचाए

मिटें भ्रांतियाँ, खिल उठे देश सारा
बुरे भाव तजकर, कुटिल मन हमारा
सुचिन्तन-मनन की नदी में नहाए

बढ़े लक्ष्य ऊँचा, लिए नौजवानी
रचे शौर्य की, कोई अनुपम कहानी
उषा दिग्विजय के, कमल नित खिलाए

मिले काम सबको, न हों हाथ ख़ाली
किसी द्वार पर भी, न दीखे सवाली
न ऊँचा भवन, झोंपड़ी को चिढ़ाए

विवेकी संभालें, दिशाहीन जन को
करें मुक्त अपराधियों से, वतन को
चमन से सजग राष्ट्र, कूड़ा हटाए

न बेआबरू हो, किसी की दुलारी
पले दृष्टि में, आदमीयत हमारी
जिएँ बेटियाँ गर्व से सिर उठाए

किशोर -गीत

हम लाएँगे जग को, स्वर्ग बनाने वाले दिन
बंजर धरती में भी, फूल खिलाने वाले दिन

हम सब मिलकर चलो, निरंतर उत्तम शिक्षा पाएँ
कभी नहीं अनमोल समय को साथी व्यर्थ गवाएँ
ये ही हैं देखो भविष्य चमकाने वाले दिन
बंजर धरती में भी फूल खिलाने वाले दिन

माता-पिता और गुरुजन की हमसे है जो आशा पूर्ण
करेंगे कठिन परिश्रम से उनकी अभिलाषा सबके
जीवन में होंगे हर्षाने वाले दिन
बंजर धरती में भी फूल खिलाने वाले दिन

सब हों सुखी-निरोगी ऐसा वातावरण बनाएँ
ले संकल्प स्वच्छता का हर गाँव-गली चमकाएँ
तब आएँगे गंगा के लहराने वाले दिन
बंजर धरती में भी फूल खिलाने वाले दिन

है दहेज़ की जो समाज में लगी हुई बीमारी
उसे मिटाने की हम सब पर ही है ज़िम्मेदारी
लाएँगे दुष्टों को नाच नचाने वाले दिन
बंजर धरती में भी फूल खिलाने वाले दिन

सड़कों पर नियमों का पालन करके ही चलना है
नहीं अश्रु बन मात-पिता की आँखों से ढलना है
यूँ हर आँगन में होंगे त्योहारों वाले दिन
बंजर धरती में भी फूल खिलाने वाले दिन

ऊँचा पद पाकर भी, सदा सौम्यता अपनाएँगे
अपनी मेहनत की रोटी खाकर ही सुख पाएँगे
फिर आएँगे विश्वगुरु कहलाने वाले दिन
बंजर धरती में भी फूल खिलाने वाले दिन

डॉ. विजेन्द्र पाल शर्मा की ग़ज़ले

१

हमें इतना भी जबरन मत करो मज़बूर, बाबूजी।
बढ़े यदि हम तो कर देंगे नशा काफूर, बाबूजी।।
हमारे ख़ून से आयी तुम्हारे गाल पर लाली।
हमें मत छेड़ना हो जाओगे बेनूर, बाबूजी।।
दबे-कुचले हुए जब भी कभी अपनी पे आते हैं।
वे घिघियाते हैं, जो कहते हैं ख़ुदको शूर, बाबूजी।।
कहीं ऐसा न हो उस हाथ में तलवार आ जाए।
बजाता ज़िंदगी भर जो रहा संतूर, बाबूजी।।
सुना है काल जिसके सामने नतशीश रहता था।
उसी को रौंदने वाले थे कपि-लंगूर, बाबूजी।।
वही सूरज कि जो अभिमान से चढ़ता है अंबर में।
बिखर जाता है दिन ढ़लते ही उसका नूर, बाबूजी।।
हमें तो प्यार का सुंदर नगर तामीर करना है।
नहीं फिरक़ापरस्ती का चलन मंजूर, बाबूजी।।

२

सुलगती धूप हो साया न मिल पाए ज़माने में।
चले आना बड़ी ठंडक है दिल के शामियाने में।।
बड़ा आसान है दुनिया की दौलत लूट कर रखना।
पसीने छूट जाते हैं मगर रोटी कमाने में।।
नज़र आती नहीं हैं आज गुरसल या कि गौरैया।
सुना है पिस गई हैं सब हवस के कारखाने में।।
न वहशी बनके लूटो रोशनी दुनिया की ए लोगो।
उसे इक पल नहीं लगता उगा सूरज छिपाने में।।
जहाँ पग पग दरिंदे घूमते हों आप क्या जाने।
वहाँ मर-मर के जीते हैं पिता बेटी बचाने में।।
मियां शाहरूख़ हैं, सलमान हैं इस दौर के हीरो।
भगत-बिस्मिल नहीं मिलते किसी के भी फ़साने में।।
कभी तो आइए हम याद करलें उन शहीदों को।
जवानी झोंक दी अपनी, हमें यह दिन दिखाने में।।

३

वो जिसने जन्म भर यारी निभाने की कसम खाई।
दुखों में दूर तक उस यार की दीखी न परछाई।।
वतन को लूटने के वास्ते तैयार नेता की
टिकट कटते ही देखो किस तरह से आँख भर आई।।
जिधर देखो उधर बेरोजगारी मुँह चिढ़ाती है ।
इसी कारण से है अपराध की गलियों में तरुणाई।।
तुम्हारे दर्द में भी आएगा आराम सच मानो।
किसी पर वार दी थोड़ी ख़ुशी तुमने अगर भाई।।
उधर बेटा लगाकर पंख डॉलर के उड़ा देखो।
इधर अम्मा की हालत परकटे पंछी सी हो आई।
कभी मजलूम दिल की बद्दुआ ख़ाली नहीं जाती।
कबीरा ने मुझे यह बात इक दोहे में सिखलाई।
अजब है पेड़ पत्थर खाके मीठे फल लुटाता है।
मगर यह बात इन्साँ की समझ में क्यों नहीं आई।।

४

हमारे गाँव में ऐसा नहीं था।
सरल था आदमी सस्ता नहीं था।।
वहाँ चौपाल थी हमदर्द सबकी।
अकेलापन शहर जैसा नहीं था।।
नहाए दूध में थे चाँद- तारे।
धुएँ से आसमाँ झुलसा नहीं था।।
रही हो नून की रोटी भले ही।
दिखावा थाल में परसा नहीं था।।
वहाँ भी मस्त होती थी जवानी।
जवानी का खुला जलसा नहीं था।।
सदा बाबा रहे राजा हमारे।
वहाँ घर-घर ही था, घर- सा नहीं था।।

डॉ. विजेन्द्र पाल शर्मा के 'माहिया'

कीकर भी चंपा हो
यदि उसके ऊपर
प्रभु की अनुकंपा हो

क्या उस-सा कोई है
फूलों में ख़ुशबू
क्या ख़ूब पिरोई है

मत जी लाचारी में
श्रम के गहने रख
तन की अलमारी में

जो प्रेम पुजारी हैं
वे ही जीने के
सच्चे अधिकारी हैं

हम प्रेम पुजारी हैं
कंस सामने हो
तो कृष्ण मुरारी हैं

आ सूरज बन जाएँ
ख़ुद जलकर जग का
अंधियारा पी जाएँ

तैरे हैं सागर में
डूब गए लेकिन
नैनों की गागर में

आओ बच्चे हो लें
इसी बहाने से
कुछ पल सच्चे हो लें

अच्छे दिन आएंगे
जिस दिन हम सारे
सच्चे बन जाएंगे

मत प्रश्नों सा दीखो
ख़ुश यदि रहना है
उत्तर बनना सीखो

कुछ तो अच्छा दीखें
कैसे जीना है
यह वृक्षों से सीखें

दिल भर भर कर आया
वह था संग सदा
मैं देख नहीं पाया

जो मित्रों वाला है
उसके जीवन में
हर वक्त उजाला है

डॉ. विजेन्द्र पाल शर्मा के दोहे

हे प्रभु तेरे पुत्र हैं राजा औ' कंगाल।
कंगालों को भी मिले हर दिन रोटी दाल।।
अपने भी जिस हाल में नहीं लगाते हाथ।
उनके चरण पखारिए जो तब देते साथ।।
ढूँढो ऐसा कैमरा, मन की ले तस्वीर।
फिर देखो कितने यहाँ, सच्चे, साधू, पीर।।
कहा नगर ने ओस पर, चलना नंगे पाँव।
मार ठहाका हँस दिया, स्मृतियों में गाँव।।
बस दो बीघा के लिए, गईं सैकड़ों जान।
कब होगी इक जान पर, सौ बीघा कुर्बान।।
बता रहे बोझिल नयन, व्याकुल मन की बात।
निर्मोही की याद में, कैसे काटी रात।।
कब्जाए रतिनाथ ने, तन- मन के सब छोर।
मुक्त करो हे प्राणधन, मोड़ो रथ इस ओर।।
सुन बसंत के गाँव में, कलियों की बरसात।
प्रेम निवेदन को चली, भँवरों की बारात।।
दिखे न सूरज एक दिन जग होता बेहाल।
उतनी ही उपयोगिता अपने भीतर ढाल।।
बाहर से गांधी दिखें, भीतर हैं जल्लाद।
जल्लादों को कह रही, दुनिया ज़िंदाबाद।।
सौ तालों में भी नहीं, छुपता है अपराध।
प्रभु के सीसी कैमरे, चलते हैं निर्बाध।।
छोटे ने क्या लिख दिया, होता नहीं यकीन।
जतन करो कुछ बाप का, देता नहीं ज़मीन।।
बेटा, बेटी बोलते 'माँ' जब पहली बार।
कंगली माँ भी चाहती, नौ निधियाँ दूँ वार।।
सच्चे तो सब छुप गए, किसका पकड़ें हाथ।
नीलकंठ दिखते नहीं, बगुलों की बारात।।
लूट तितलियों ने लिया, फूलों का मकरंद।
लुटने का जी भर लिया, फूलों ने आनंद।।
वर्ण नहीं, वाणी सदा, होती है अनमोल।
इसी सत्य की पोटली, कोयल ने दी खोल।।
ज्ञान बाँटता इस तरह, जैसे कोई संत ।
भीतर से मैला रहा, जो जीवनपर्यंत ।।
आँख मीचने से भला, कब मिलता है त्राण।
डटकर करो मुकाबला, जब तक तन में प्राण।।
जो प्रियतम के रँग रँगा भूल गया निज रंग
भीतर मेले लग गए नस-नस भरी उमंग।।
एक यही है कामना, सबको मिले सुकून।
तन के, मन के, प्राण के, खिलते रहें प्रसून।।

उत्तर प्रदेश साहित्य सभा की गीत प्रतियोगिता २०२५ में राष्ट्रीय स्तर पर हुई गीत प्रतियोगिता में डॉ. विजेन्द्र पाल शर्मा सहारनपुर को द्वितीय पुरस्कार प्राप्त हुआ है।

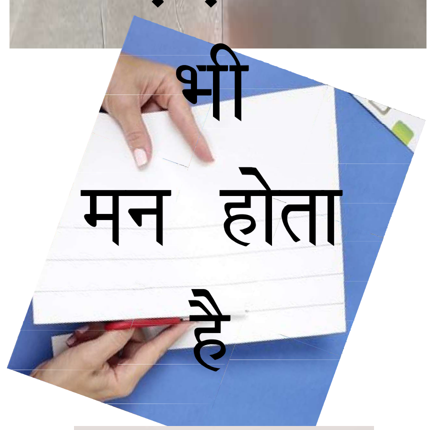

कागज़ का भी मन होता है

डॉ. विजेन्द्र पाल शर्मा
५/३१५१- न्यू गोपाल नगर, नुमाइश कैंप,
सहारनपुर २४ ७००१
सचलभाष- ६४ १२४३ ५७२८

गीत

कागज़ का भी मन होता है
हर क्षण मन में उल्लास भरे
आशा का हार पिरोता है
कागज़ का भी मन होता है

इसका वक्षस्थल मत चीरो
कोमल स्पर्श करो भाई
इसमें बलिदानी सोए हैं
वीरों की संचित तरुणाई
इस पर फूहड़पन मत परसो
लज्जा से नयन भिगोता है
कागज़ का भी मन होता है

जब मन की कुछ बातों का हो
अधरों पर लाना बहुत कठिन
जब आतुर मन तय करता हो
लंबी रातें तारे गिन-गिन
वाणी का तब वाहक बनकर
प्रियतम के प्राण बिलौता है
कागज़ का भी मन होता है

परदेस गए बेटे की माँ
जब कोई ख़बर नहीं पाती
ऐसा होगा - वैसा होगा
यह सोच-सोच धड़के छाती
तब कागज़ उसका नाम लिखा
माँ के मन चंदन बोता है
कागज़ का भी मन होता है

गीता, कुरान, गुरुग्रंथ और
बाईबिल इसकी ही महिमा
रसखान, बिहारी, तुलसी की
इसके कारण ही है गरिमा
जो सदर पलकों पर रखता
वह अमर जगत में होता है
कागज़ का भी मन होता है

और अंत में

तथ्यात्मकता के धनी

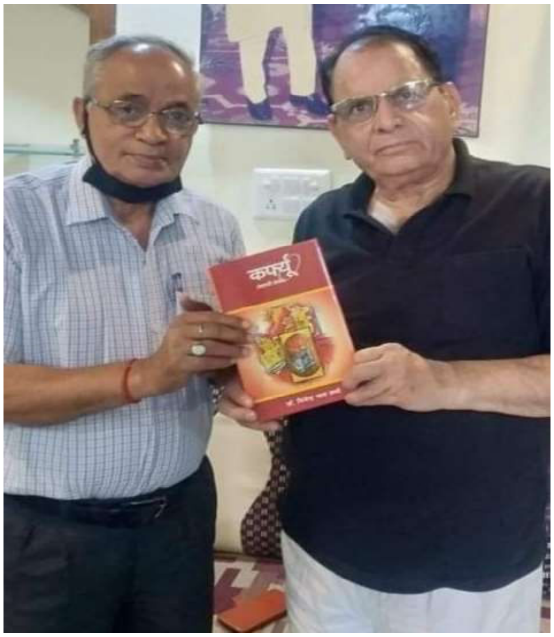

मैंने झुंझलाकर पूछा कि बहिष्कार क्यों किया गया, तो डॉ. विजेन्द्र पाल शर्मा ने एक उदाहरण के माध्यम से अपनी बात यूँ रखी कि सर! मैं सुबह-सवेरे एक मज़दूर को कुछ काम कराने के लिए सौ रुपये मज़दूरी देना तय करके लाता हूँ। मगर बड़ी लगन और साफ-सफाई से काम निपट जाने के बाद शाम को उसे पचहत्तर रुपये देने की बात करता हूँ।

'यह तो सरासर बेईमानी है।' मैंने कहा।

प्रो. आर. पी. सिंह

पूर्व वी.सी. (चौधरी चरण सिंह वि, विद्यालय, मेरठ)

मैंने जब चौ. चरण सिंह विश्वविद्यालय, मेरठ के कुलपति पद का कार्यभार संभाला, तभी महाविद्यालयों में परीक्षाओं के बहिष्कार का सामना करना पड़ा, जो मेरे जैसे व्यक्ति के लिए असहनीय था। परीक्षाओं का पहला दिन और पहली पाली। मैं परीक्षा संचालन की स्थिति जानने के लिए निकला और सबसे पहले डी.ए.वी. कॉलेज, मुज़फ़्फ़र नगर पहुँचा तो देखा परीक्षा नहीं हो रही थी। पूछने पर पता चला कि महाविद्यालय समन्वय समिति के आह्वान पर परीक्षा का बहिष्कार हो रहा है, जिसके संयोजक डॉ. विजेन्द्र पाल शर्मा हैं और जो एक प्रतिनिधि मण्डल के साथ मुझसे मिलने के लिए विश्वविद्यालय गए हुए हैं। मैं तुरन्त विश्वविद्यालय लौट आया और उनके प्रतिनिधिमण्डल और यूनिवर्सिटी रजिस्ट्रार को कार्यालय में बुलवाया।

परीक्षा बहिष्कार से मुझे बौखलाहट हो रही थी और मैं चाहता था कि परीक्षा में बाधा उत्पन्न करने के मामले में समन्वय समिति के ख़िलाफ़ कोई कड़ा एक्शन लिया जाय। मैंने अपनी नाराज़गी प्रतिनिधि मण्डल पर उतार दी लेकिन मुझे आश्चर्य हुआ कि मेरे बोलते रहने के बीच प्रतिनिधि मण्डल के सभी सदस्य केवल मेरी बात सुनते रहे। उनका इस तरह संयमपूर्वक चुप रहना मुझे असामान्य बना रहा था। मेरी बातें सुन लेने के बाद डॉ. विजेन्द्र पाल शर्मा ने विनम्रतापूर्वक कहा कि मैं उनकी बात शान्तभाव से सुनूँ। उन्होंने सबसे पहले मुझे कुलपति के रूप में पद भार ग्रहण करने पर शुभकामनाएं दीं तथा प्रतिनिधि मण्डल के सदस्यों का परिचय कराया और इस प्रकार बोलना शुरू किया- 'सर! परीक्षाओं का बहिष्कार करना हमें भी अच्छा नहीं लग रहा है, परन्तु यह कदम हमने विश्वविद्यालय के असहयोगपूर्ण रवैये से क्षुब्ध होकर उठाया है। बहिष्कार सम्बंधी कई पत्र आपसे पूर्व विश्वविद्यालय को प्रेषित किए जा चुके थे, जिनकी लगातार उपेक्षा की जाती रही। मुझे लगता है कि यह तथ्य आपके संज्ञान में नहीं लाया गया है।'

मैंने झुंझलाकर पूछा कि बहिष्कार क्यों किया गया, तो डॉ. विजेन्द्र पाल शर्मा ने एक उदाहरण के माध्यम से अपनी बात यूँ रखी कि सर! मैं सुबह-सवेरे एक मज़दूर को कुछ काम कराने के लिए सौ रुपये मज़दूरी देना तय करके लाता हूँ। मगर बड़ी लगन और साफ-सफाई से काम निपट जाने के बाद शाम को उसे पचहत्तर रुपये देने की बात करता हूँ।

'यह तो सरासर बेईमानी है।' मैंने कहा।

'बस यही हुआ है हमारे साथ। सर! विश्वविद्यालय द्वारा कार्यों के लिए बहुत विचार विमर्श के पश्चात् जो पारिश्रमिक पूर्व में तय किये जा चुके थे और जिनका सर्कुलर भी निकल चुका था, उन्हें विश्वविद्यालय ने बिना हमारे संज्ञान और सहमति के अब कम कर दिया है।'

मैंने रजिस्ट्रार से पूछा तो पता चला कि यही हुआ है।

हालांकि वे इसका कारण बताना चाहते थे, पर मुझे लगा कि कारण चाहे कुछ भी हो, जो हुआ वह उचित नहीं था।

मैंने तुरन्त पूर्व पत्र के लागू रहने का आदेश दिया और परिणाम यह हुआ कि सम्पूर्ण परीक्षा निर्विघ्न सम्पन्न हुई। मेरे कार्यकाल में फिर कभी महाविद्यालयों के साथ ऐसा कोई विवाद नहीं हुआ।

मैं डॉ. विजेन्द्र पाल शर्मा के अपना पक्ष रखने के तरीके से इतना प्रभावित हुआ कि मैं जब तक कुलपति रहा उनकी प्रत्येक समस्या का, जो सदैव उचित ही होती थी, अविलम्ब समाधान करने में खुशी का अनुभव करता रहा।

मेरा मानना है कि किसी भी संगठन के मुखिया के रूप में डॉ. विजेन्द्र पाल शर्मा जैसे विवेकी और स्पष्टवक्ता का होना संगठन का सौभाग्य होता है। मैं विभावरी को अपने सचिव डॉ. विजेन्द्र पाल शर्मा के व्यक्तित्व और कृतित्व को केन्द्र में रखकर ग्रन्थ के प्रकाशन हेतु शुभकामनाएं देता हूँ तथा डॉ. शर्मा के लिए सुखी एवं स्वस्थ जीवन की कामना करता हूँ।

त्रैमासिक
RNI - UPHIN/2018/77444 ISSN 2582-1288
शोधादर्श
संदर्भित एवं समीक्षित शोध आलेखों की त्रैमासिक पत्रिका
SHODHADARSH
A Quarterly Peer Reviewed and Refereed Research Magazine

राष्ट्रवादी विचारों के 'शोधादर्श शोध संस्थान' अभियान से जुड़ें और राष्ट्र के विकास में सहयोग करें

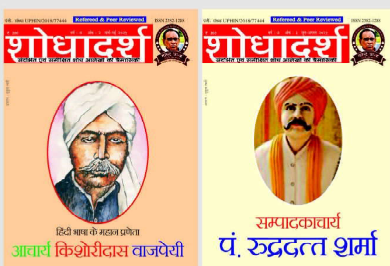

राष्ट्रवादी विचारों का 'शोधादर्श शोध संस्थान'

('शोधादर्श' पत्रिका द्वारा नियंत्रित)

जुड़ने वाले लोग

- कोई भी, जो व्यसनी/अपराधी/ पागल न हो। सकारात्मक विचार वाला हो। किसी भी राजनीतिक अथवा अराजनीतिक संगठन से जुड़ा हो। कहीं भी कार्यरत हो। किसी भी धर्म और जाति का हो। रहता कहीं भी हो मगर भारतीय हो। किसी भी आयु का हो। अपने विचार लिखकर और बोलकर व्यक्त कर सकता हो। अनुशासन का पालन करने वाला हो। दूसरे के विचार सुनने वाला हो। राष्ट्र और समाज के प्रति किसी निर्णय पर पहुंचने वाला हो। सहयोग करने वाला हो, चुगलखोर और मजाक बनाने वाला न हो। शिक्षक, पत्रकार, चिकित्सक, वकील आदि कोई भी हो। कोई भी भाषा-भाषी हो सकता है। शिक्षित अथवा अशिक्षित हो। अनिवार्यतः 'शोधादर्श' पत्रिका की कम से कम वार्षिक सदस्यता प्राप्त की हो।

हमारे उद्देश्य

- राष्ट्र और राष्ट्र की समस्याओं पर विधिपूर्वक चर्चा की जाएगी। राष्ट्र को उन्नत बनाने के लिए विचार व्यक्त किए जाएंगे। शिक्षा और शोध पर विशेष ध्यान रहेगा। सरकार की नीतियों और उसमें सुधार पर चर्चा कर सरकार को अवगत कराया जाएगा।
- लगभग एक लाख पुस्तकों, पत्रिकाओं, रिपोर्ट आदि की पीडीएफ 'शोधादर्श' की वैबसाइट पर निशुल्क उपलब्ध कराने का प्रयास।

क्या नहीं होगा

- यह संस्था कोई देश विरोधी कार्य नहीं करेगी। यह संस्था देश में किसी भी प्रकार का द्वेष नहीं फैलाएगी।

आय

- उद्देश्यपूर्ति के लिए दान, चंदा, सहयोग आदि के रूप में धन स्वीकार किया जाएगा।

व्यय

- प्रचार, प्रसार, प्रकाशन, यातायात, आयोजन, मदद, सहयोग आदि पर व्यय किया जाएगा

पंजीकरण

- यह संस्थान त्रैमासिक पत्रिका 'शोधादर्श' का सहयोगी नॉन कॉमर्शियल संगठन (वैचारिक) होगा। इसलिए अलग से संगठन के रजिस्ट्रेशन की आवश्यकता नहीं है किन्तु भविष्य में जब भी संगठन को रजिस्टर्ड कराने की आवश्यकता होगी तब विधिपूर्वक नीति अपनाई जाएगी। फिलहाल संगठन में कोई स्थाई अध्यक्ष या पदाधिकारी नहीं होगा। जहां कहीं भी कोई कार्यक्रम कराया जाएगा वहां की अस्थाई कार्यकारी समिति बनाई जाएगी जो कार्यक्रम के तुरंत बाद भंग मान ली जाएगी।

आप भी जुड़ें, साथ हमारे।

https://www.shodhadarsh.page/ के अतिरिक्त एक और अन्य वैबसाइट पर काम चल रहा है, जिसमें शोध प्रवृत्ति को बढ़ाने संबंधी अनेक सुविधाएं होंगी

संपादक (शोधादर्श) सचलभाष — 9897742814 (वाट्सएप)

आपकी सदस्यता हमें बड़ा सहयोग प्रदान करेगी

वार्षिक सदस्यता : 1000 रु. पांच वर्ष सदस्यता : 4500 रु.

भुगतान करें

SHODHADARSH

INDIAN OVERSEES BANK, NAJIBABAD AC- 368602000000186 IFSC- IOBA0003686

भुगतान पर्ची 9897742814 पर भेजें

Website - https://opendoornews.in RNI-UPHIN/2021/79954

राष्ट्रहित में स्वदेशी अपनाएं

खुले दिमाग़ के खुले विचार
ओपन डोर
राष्ट्रीय साप्ताहिक समाचार-पत्र